व्याख्यान शिक्षक

संकलन कर्ता—

पं० भैयालाल जैन 'सहोदर'

Rs 1 / 50

प्रतियां १०००

मूल्य—

: प्रकाशक :
जैनेन्द्र साहित्य सदन
जैनेन्द्र प्रेस,
ललितपुर (झांसी) उ० प्र०

नित्योपयोगी पुस्तकों का परिचय प्राप्त करने के लिये
ऊपर के पते पर एक कार्ड लिख भेजिये ।

: मुद्रक :
ोदास जैन,
र (उ० प्र०)

निवेदन

आज मुझे पाठकों की सेवा में "व्याख्यान शिक्षक" प्रस्तुत करते हुये अत्यन्त प्रसन्नता है। कवि कृपाराम जी का यह वाक्य "एक बोलबो न सीख्यो, सब सीख्यो गयो धूर में" अक्षरशः सत्य है। विद्यालयों की शिक्षा से अवकाश लेकर समाजसेवा की ओर सन्मुख स्नातकों एवं शास्त्र-प्रवचन की आकांक्षा रखने वाले महानुभावों को यह पुस्तक उनकी वक्तृत्व कला के संवर्धन के लिये पूर्णरूप से सहायता प्रदान करेगी।

इस संकलन में मुझे समय समय पर निम्नलिखित विद्वानों के भाषणों से सहायता प्राप्त हुई है, अतएव इन विद्वानों व लेखकों का अत्यन्त कृतज्ञ हूँ:—

श्री १०५ पूज्य क्षुल्लक गणेशप्रसाद जी वर्णी, श्रीमान् गुरुवर्य पं० बंशीधर जी न्यायालंकार इन्दौर, श्रीमान् पंडित फूलचंद्र जी शास्त्री (बुढ़वार निवासी), श्रीमान् सिद्धान्तरत्न पं० नन्हेंलाल जी राजाखेड़ा, श्रीमान् पं० मौजीलाल जी परवार बीना, श्रीमान् पं० घमालाल जी न्यायतीर्थ लालगढ़, श्रीमान् पं० दामोदरदास जी सागर, श्रीमान् पं० पन्नालाल जी 'वसंत' साहित्याचार्य सागर, श्रीमान् पं० परमेष्ठीदास जी न्यायतीर्थ ललितपुर। तथा पं० दीपचन्द जी वर्णीकृत 'दशलक्षणधर्म' पुस्तक से भी सहायता ली है। तदर्थ आभारी हूँ।

हाल–सागर (म. प्र.)
ता० २५–८–७३

निवेदक—
भैयालाल 'सहोदर'
मालथौन (सागर) निवासी

❀ दो-शब्द ❀

卐

श्री मैयालाल जी 'सहोदर' मेरे इतने निकटतम बन्धु हैं कि मैं उनकी प्रशंसा या अप्रशंसा कुछ भी नहीं कर सकता। फिर भी उनका स्नेह-भरा आग्रह है कि मैं उनके इस संग्रह पर 'दो-शब्द' अवश्य लिखूं। मैंने 'व्याख्यान शिक्षक' को आद्योपान्त पढ़ा है। इसे पढ़ते हुये कई जगह मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है। इसके अनेक उदाहरण, कथायें और श्लोकादि बहुत बढ़िया और प्रभावक हैं। यद्यपि कहीं कुछ अति सामान्य विषय भी आ गये हैं, उनसे भी सामान्य जन का मनोरंजन तो होगा ही।

सचमुच ही व्याख्याता बनने के लिये प्रारम्भ में एक ऐसे सर्वांगपूर्ण संग्रह की उपयोगिता तो है ही। श्री सहोदर जी का यह परिश्रमपूर्ण सत्प्रयत्न बहुतों के लिये आशीर्वाद सिद्ध होगा और सर्वसाधारण जनता के लिये भी ज्ञानवर्द्धन एवं मनोरंजन का कारण बनेगा। इस उपयोगी प्रयास के लिये मैं 'सहोदर' जी को बहुत बधाई देता हूँ।

—परमेष्ठीदास जैन।

व्याख्यान शिक्षक
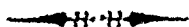
❀ मंगलाचरण ❀

यो विश्वं वेद वेद्यं जननजलनिधेर्भङ्गिनः पारदृश्वा,
पौर्वापर्याविरुद्धं वचनमनुपमं निष्कलंकं यदीयम् ।
तं वंदे साधुवंद्यं निखिलगुणनिधिं ध्वस्तदोषद्विषन्तम्,
बुद्धं वा वर्द्धमानं शतदलनिलयं केशवं वा शिवं वा ॥

जिसने संसार के जानने योग्य समस्त पदार्थों को जान लिया हो, जो लहराते हुए संसार रूपी समुद्र से पार हो चुका हो, जिसके वचन पूर्वापर विरोध रहित, निर्दोष और अनुपम हों, जिसने समस्त दोषों को नष्ट कर दिया हो और जो समस्त गुणों का भण्डार हो, मैं उस महापुरुष को चाहे वह ब्रह्मा, विष्णु, महेश, बुद्ध अथवा महावीर कोई भी हो, नमस्कार करता हूं ।

卐

यस्मिन्निखिला दोषाः न सन्ति, सर्वे गुणाश्च विद्यन्ते ।
ब्रह्मा वा विष्णुर्वा हरो जिनो वा नमस्तस्मै ॥

जिसमें सम्पूर्ण दोष न हों, और समस्त गुण मौजूद हों, वह चाहे ब्रह्मा हों, विष्णु हों, महेश हों, या जिनेन्द्र हों, उन्हें नमस्कार हो ।

卐

अनन्तविज्ञानमनन्तवीर्यतामनन्तसौख्यत्वमनन्तदर्शनम् ।
बिभर्ति योऽनन्तचतुष्टयं विभुः स नोऽस्तु शांतिर्भवदुःखशांतये ॥

जो अनन्त ज्ञान, अनन्त वीर्य, अनन्त सुख, और अनन्त दर्शन, इन चार अनन्त चतुष्टयों से सुशोभित हैं ऐसे श्री शान्तिनाथ भगवान हमारे संसाररूपी दुखों को शान्त करें ।

卐

श्रियःपति पुष्यतु वः समीहितं, त्रिलोकरक्षानिरतो जिनेश्वरः ।
यदीय पदाम्बुजभक्तिशीकरः, सुरासुराधीशपदाय जायते ॥

श्री (अंतरंग बहिरंग लक्ष्मी) के स्वामी, तीन लोकों की रक्षा करने वाले जिनेन्द्र, इन लोगों की मनोभिलाषा को पुष्ट करें, जिनकी चरणकमलों की भक्ति का कण इन्द्रपद को प्राप्त कराता है ।

यस्मिन्निखिला दोषाः न सन्ति, सर्वे गुणाश्च विद्यन्ते ।
ब्रह्मा वा विष्णुर्वा हरो जिनो वा नमस्तस्मै ॥

जिसमें सम्पूर्ण दोष न हों, और समस्त गुण मौजूद हों, वह चाहे ब्रह्मा हो, विष्णु हो, महेश हो, या जिनेन्द्र हो, उसे नमस्कार हो ।

卐

अनन्तविज्ञानमनन्तवीर्यतामनन्तसौख्यत्वमनन्तदर्शनम् ।
बिभर्ति योऽनन्तचतुष्टयं विभुः स नोऽस्तु शान्तिर्भवदुःखशान्तये ॥

जो अनन्त ज्ञान, अनन्त वीर्य, अनन्त सुख, और अनन्त दर्शन, इन चार अनन्त चतुष्टयों से सुशोभित हैं ऐसे श्री शान्तिनाथ भगवान हमारे संसारिक दुखों को शान्त करें ।

卐

श्रियःपति पुष्यतु वः समीहितं, त्रिलोकरक्षानिरतो जिनेश्वरः ।
यदीय पदाम्बुजभक्तिशीकरः, सुरासुराधीशपदाय जायते ॥

श्री (अंतरंग बहिरंग लक्ष्मी) के स्वामी, तीन लोकों की रक्षा करने वाले जिनेन्द्र, तुम लोगों की मनोभिलाषा को पुष्ट करें, जिनकी चरणकमलों की भक्ति का कण इन्द्रपद को प्राप्त कराता है ।

卐

अध्याय पहला

सम्यग्दर्शन

संसाररूपी वृक्ष की जड़ —

इस भव-तरु को मूल इक, जानहु मिथ्याभाव ।
ताकौं करि नमू्ल अब, करिये मोक्ष उपाव ॥

मिथ्यात्व का प्रभाव—

मिच्छत्तं वेदंतो जीवो विवरीयदंसणो होदि ।
णय धम्मं रोचेदि हु महुरं खु रसं जहा जरिदो ॥

मिथ्यात्व को वेदन करते हुये जीव के विपरीत दर्शन होता है, उसको धर्म नहीं रुचता है। जैसे पित्तज्वर वाले को मीठा दुग्धादि रस नहीं रुचता ।

卐

अतत्त्वमपि पश्यन्ति तत्त्वं मिथ्यात्वमोहिताः ।
मन्यन्ते तृपितास्तोयं मृगा हि मृगतृष्णिका ॥

मिथ्यात्व से मोहित प्राणी खोटे तत्वों को तत्व समझते हैं, जैसे प्यासे हरिण मृगमरीचिका को जल समझते हैं।

卐

सम्यग्दर्शन का लक्षण—

"तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ।"

आत्मा से साक्षात् सम्बन्ध रखने वाले तत्त्वरूप अर्थों का निश्चय (विश्वास) करना सम्यग्दर्शन है।

"दंसणमूलो धम्मो ।"

सम्यग्दर्शन धर्म की जड़ है।

नोट रत्नकरण्ड श्रावकाचार से इस प्रकरण को विशेष स्पष्ट रूप में समझना चाहिये।

卐

कविवर पं० बनारसीदास जी द्वारा सम्यग्दृष्टि की प्रशंसा—

भेदविज्ञान जग्यो जिनके घट,
शीतल चित्त भयो जिमि चंदन।
केलि करें शिव-मारग में,
जगमांहि जिनेश्वर के लघु नंदन॥
सत्य स्वरूप सदा जिनके,
प्रगट्यौ अवदात मिथ्यात्व निकंदन।
शांत दशा तिनकी पहिचान,
करें कर जोड़ 'बनारसि' वन्दन॥

卐

सत्रहवीं शताब्दी में पं० बनारसीदास जी अकबर के दरबार में प्रसिद्ध कवि थे। अन्य ईर्ष्यालुओं ने बादशाह से शिकायत की, कि बनारसीदास जी आपको नमस्कार नहीं करते। इस पर बादशाह ने सभी दरबारियों को एक छोटे से दरवाजे में से (जो बादशाह के सिंहासन के सामने था) दरबार में आने का हुक्म दिया। दूसरे दिन सभी दरबारी उस छोटे से दरवाजे से होकर दरबार में उपस्थित हुए। जब कवि जी उस दरवाजे में से होकर निकले तो वे पहले पैर और पीछे सिर निकालकर दरबार में पहुँचे। यह देख कर बादशाह ने फिर हुक्म दिया कि सभी दरबारी जब दरबार में आयें तो मुझे सलाम किया करें। तीसरे दिन सभी ने बादशाह को सलाम किया। कवि जी अपने हाथ की अंगुली में पार्श्वनाथ की चित्रमय अंगूठी पहिनकर पहुँचे, और सलाम किया। परन्तु लोगों से उन्हें मालूम हो गया कि उन्होंने बादशाह को नमस्कार न कर अंगूठी वाले अपने इष्टदेव को नमस्कार किया है।

कुछ दिन के बाद बादशाह ने निम्न प्रकार समस्यापूर्ति करने को दी और सोचा कि इसकी पूर्ति में तो हमारे गुणगान करना ही पड़ेंगे। चौथे दिन सभी कविगण बादशाह की प्रशंसात्मक समस्या-पूर्ति करके ले गये। जब बादशाह ने उनकी समस्या-पूर्ति सुनी तो दंग रह गये और उन्हें उनके इस साहस पर इनाम दी। समस्या थी—

"मिल आश करें वे अकब्बर की ।"

समस्यापूर्ति यों की गई थी -

जिय केतक भेष धरे जग में,
छवि भाई है आज दिगम्बर की ।
चिन्तामणि जब प्रगट्यो घट में,
तब कौन जरूर अडम्बर की ॥
जिन तारन तरन को सेय लिया,
परवाह करे को जरब्बर की ।
जिन्हें आश नहीं जगदीश की है,
मिल आश करें वे अकब्बर की ॥

निर्भयता—

आत्मा अमर है देह नश्वर, यह समझ जो जायगा ।
अन्याय की तलवार से वह, क्यों भला डर खायगा ॥

卐

सच्चे श्रद्धान से सिद्धि

[१]

एक ग्वालिन नदी पार करके रोज सवेरे एक जिनभक्त सेठ के यहाँ दूध देने जाया करती थी। एक दिन जोर की बारिश हुई और नदी चढ़ आई। वह किसी मुनि के बताये हुए 'णमोकार मंत्र' का पाठ करती हुई नदी पार कर सेठ

जी के यहाँ ठीक समय पर दूध लेकर पहुँची। यह देखकर सेठजी को बड़ा अचरज हुआ। वे ग्वालिन से पूछने लगे कि—तूने नदी पार कैसे की? आखिर में ग्वालिन ने वह मंत्र बताया। यह सुनकर सेठ जी बोले—इस मन्त्र को तो हम प्रतिदिन जपा करते हैं, चलो हम भी नदी पार करेंगे। वह ग्वालिन तो पार हो गई परन्तु सेठ जी विना सच्ची श्रद्धा के नदी में डूबने लगे और वापिस घर चले आये।

[२]

अंजन चोर रानी का हार चुराकर रनवास से जैसे ही बाहर आया, हार की जगमगाहट देखकर कोतवाल ने उसका पीछा किया। कोतवाल को पीछे लगा देख, हार को फेंक उस श्मशान भूमि में पहुँचा जहाँ जिनदत्त सेठ आकाश-गामिनी विद्या सिद्ध कर रहे थे, परन्तु जिनको यह डर लग रहा था कि—कहीं ऐसा न हो कि अन्तिम १०८ वीं सीके की तनी के कट जाने पर विद्या सिद्ध न हो, और नीचे रखे हुये हथियारों पर गिरकर प्राणान्त हो जायें। झट अंजन चोर ने प्रार्थना की कि सेठ जी! मैं विद्या सिद्ध करूंगा, मुझे इसका मंत्र बतलाइये। सेठ जी ने 'णमोकार मत्र' बतलाया, परन्तु उसे वह इतनी जल्दी याद न हो सका, और उसने—"आणं ताणं कछू न जाणं सेठ वचन परमाणं" कहते हुए सींके की १०८ तनी काटकर विद्या सिद्ध करली।

卐

[४]

एक समय इन्द्र ने अपनी सभा में सम्राट् चक्रवर्ती भरत के निर्मल भावों की प्रशंसा की। उसे सुनकर एक देव ने विचार किया कि इस बात की परीक्षा करना चाहिये कि क्या सचमुच ही "भरत घर में ही वैरागी" हैं? फिर वह मनुष्य का रूप धारण करके चक्रवर्ती की सभा में आया। नमस्कार करने के बाद उसने प्रश्न किया कि हे राजन! आपके इतनी बड़ी सम्पदा होने पर भी आप संसार से विरक्त रहते हैं, यह कैसे? यह सुनकर चक्रवर्ती ने कहा—ठीक है, एक काम करो यह एक तैल भरा कटोरा है, इसे अपनी हथेली पर रखकर हमारे रनवास को देख आओ; परन्तु शर्त यह है कि कटोरे में से तेल की एक भी बूंद नीचे न गिरने पावे, अन्यथा कारागार में बन्द कर दिये जाओगे। साथ में एक सिपाही लगा दिया। अब वह वेचारा उस कटोरे को लिये हुये सारे रनवास का चक्कर लगाकर वापिस आया। चक्रवर्ती ने पूछा कि कहो भाई 'हमारा रनवास कैसा सुन्दर है? उसमें कैसी कैसी रूपवती रानियां हैं? बताओ।' यह सुनकर वह बोला कि 'महाराज! मेरी दृष्टि तो इस कटोरे पर रही, और मैंने कुछ नहीं देखा।' यह सुनकर चक्रवर्ती ने कहा कि ठीक इसी प्रकार की इतनी बड़ी विभूति के होते हुए भी मेरी दृष्टि हमेशा आत्मचिंतन की ओर रहती है। सच है—

गेही पै गृह में न रचै, ज्यों जलतें भिन्न कमल है।
नगर-नारि को प्यार यथा, कादे में हेम अमल है॥

卐

पण्डित मूरख दो जनें, भोगत भोग समान।
पण्डित समवृति ममत बिन, मूरख हरष अमान॥

[५]

कौशाम्बी नगरी में गंधर्वसेन नाम के राजा राज्य करते थे। उन्होंने एक पद्मरागमणी अलंकार में जड़ने के लिये अपने नगरसेठ-अंगारदेव को दी। घर जाकर सेठ जी ने वह मणी रखदी और भाग्यवश पधारे हुये मुनिराज को पड़गाह कर उन्हें आहार दिया। आहार लेकर मुनिराज वन की ओर चले गये। सेठ जी ने भी भोजन किया। बाद में वह मणि सम्हाली तो नहीं मिली। उसने सोचा, यहाँ सिवाय मुनि के और कोई नहीं आया। हो न हो, वे ही वह मणी ले गये हैं। वह, हाथ में डंडा लेकर वन की ओर चल दिया। वहां पहुँचकर दूर से ही मुनि को देखकर वह मणी मांगी जब ध्यानस्थ मुनि ने कोई उत्तर नहीं दिया, तो सेठ ने वह डण्डा मुनि को मारने के लिये फेका। दैवात् वह डण्डा मुनि को न लगकर एक मयूर के कण्ठ में लगा, जिससे उस मयूर ने वह मणी उगल दी। यह देखकर सेठ उस मणी को लेकर पश्चात्ताप करता हुआ घर आया। उसे अलकार में जड़वा कर राजा को देकर बोला—महाराज! लीजिये अपनी मणी,

मैं तो अब अपनी मणी को खोजूंगा। आपकी इस मणी ने मुझे मेरी मणी की याद दिला दी। सच है —

दो दो नयना सब धरें, मणी न परखे कोय।
सम्यग्दृष्टी जौहरी जग में विरला होय॥

卐

जायन्ते विरसा रसा, विघटते गोष्ठी कथा-कौतुकम्,
शीर्यन्ते विषयास्तथा, विरमति प्रीतिः शरीरेऽपि च।
जोषं वागपि धारयन्त्यविरमा, नन्दात्मनस्त्वात्मन,-
श्चितायामपि यातुमिच्छति मनो दोषैः समं पंचताम्॥

अपनी आत्मा के निजानन्द में लीन हो जाने वाले महापुरुष के रस विरसता को प्राप्त हो जाते हैं, गोष्ठी तथा कौतुक नष्ट हो जाते हैं, विषय कषायादि गलित हो जाते हैं, शरीर से भी प्रीति नहीं रहती है, वाणी में सरलता आ-जाती है, चिन्तायें नष्ट हो जाती हैं, मन वश में हो जाता है और समस्त दोष नष्ट हो जाते हैं।

卐

आत्मार्थी बनो—

न क्लेशो न धनव्ययो, न गमनं देशान्तरे प्रार्थना,
केषांचिन्न बलक्षयो न तु भयं, पीड़ा न कस्माश्च न।
सावद्यं न न रोगजन्मपतनं, नैवान्यसेवा न हि,
चिद्रूपं स्मरणे फलं बहुतरं किन्नाद्रियंते बुधाः॥

आत्मा का स्मरण करने में न तो क्लेश होता है, न धन खर्च होता है, न परदेश जाना पड़ता है, न किसी से कोई प्रार्थना करनी पड़ती है, न बल का क्षय होता है, न डर खाना पड़ता है, न किसी की ओर से पीड़ा होती है, कोई पाप कार्य नहीं करना पड़ता है, न रोग, जन्म एवं मरण में पड़ना पड़ता है, और न किसी की सेवा ही करना पड़ती है। इस प्रकार विना किसी कठिनाई के आत्मा के स्मरण का बहुत फल है, तब फिर समझदार मनुष्य क्यों ग्रहण नहीं करते ?

卐

भेदविज्ञानतः सिद्धाः, सिद्धा ये किल केचन ।
अस्यैवाभावतो बद्धाः बद्धा ये किल केचन ॥

जितने भी सिद्ध हुये हैं वे सब भेद-विज्ञान से ही हुए हैं, और जो बद्ध (कर्मों से) हैं वे उस भेद-विज्ञान के अभाव से ही हैं ।

卐

गृहस्थ कर्तव्य

श्रावक—श्रा = श्रद्धावान (दर्शन), व = विवेकवान (ज्ञान), क = क्रियावान् (चारित्र) ।

देवपूजा गुरूपास्तिः, स्वाध्यायः संयमस्तपः ।
दानं चेति गृहस्थानां, षट्कर्माणि दिने दिने ॥

१-जिनेन्द्रपूजन, २-गुरुसेवा, ३-स्वाध्याय, ४-संयम, ५-तप और ६-दान; ये गृहस्थों के प्रतिदिन करने के छह आवश्यक कर्म हैं।

卐

दर्शन का फल—

किसी नगर में एक सेठ रहते थे। वे बड़े प्रमादी थे। भाग्यवश उसी नगर में एक मुनिराज पधारे। उन्होंने सेठ जी से देव-दर्शन करने की प्रतिज्ञा लेने के लिये विशेष आग्रह किया, परन्तु उन्हें प्रतिज्ञा न लेते देख, इस बात की प्रतिज्ञा दी कि उनके घर के सामने जो कुम्हार रहता है उसके भैंसे की चांद देखकर भोजन किया करें। कुछ दिन बाद एक रोज कुम्हार जल्दी ही भैंसे को लेकर मिट्टी खोदने चला गया। इधर सेठ जी को जब भैंसा नहीं दिखा, और यह मालूम पड़ा कि वह खदान को चला गया है तो आप खदान की ओर चल दिये। भाग्यवश उस दिन मिट्टी खोदते खोदते कुम्हार को एक अशर्फियों से भरा हुआ घड़ा मिला। सेठ जी दूर से भैंसे की चांद देखकर वापिस लौट पड़े। उन्हें वापिस जाते देख कुम्हार ने सोचा कि इन्होंने मेरे इस धन को देख लिया है। तब उसने सेठ जो बुलाया, परन्तु सेठ यह कहकर कि 'हमने तो देख लिया', अपने घर चले आये। कुम्हार भी पीछे पीछे सेठ जी के घर आया और

आधा धन सेठ जी को दे दिया। यह देखकर सेठ ने सोचा कि भैंसे की चाँद के देखने की प्रतिज्ञा लेने पर जब इतना धन मिला तो त्रिलोकीनाथ के दर्शन की प्रतिज्ञा लेने पर न जाने कितना लाभ होगा! यह सोचकर उसने देव-दर्शन की प्रतिज्ञा ले ली।

卐

जत्र चिंते तत्र सहस फल, लक्खा फल गमने।
कोड़ाकोड़ी अनन्त फल, जब जिनवर दिट्ठे॥

卐

देव-पूजा

सानन्दं सदनं सुताश्च सुधियः, कान्ता च सद्भाषणीः।
सन्मित्रं सुधनं स्वयोषितरतिश्चाज्ञापरा सेवकाः॥
आतिथ्यं जिनपूजनं प्रतिदिनं मिष्टान्नपानं गृहे।
साधो संगमुपासते हि सततं, धन्यो गृहस्थाश्रमः॥

वह गृहस्थाश्रम धन्य है जिसमें आनन्ददायक मकान हो, बुद्धिमान पुत्र हो, प्रिय वचन बोलने वाली स्त्री हो, अच्छे मित्र हों, धन हो, इच्छानुकूल रति हो, आज्ञाकारी सेवक हों, मिष्टान्न-पान हो, अतिथियों का सत्कार हो, प्रतिदिन जिनेन्द्र भगवान का पूजन हो और साधु-संगति हो।

पूजा का फल —

लोपै दुरित हरै भव संकट, आपै रोग रहित निति देह।
पुन्य भण्डार भरै यश प्रगटै, मुकति पंथ सों करे सनेह॥
रचै सुहाग देय शोभा जग, परभव पहुँचावत सुर गेह।
कुगति बन्ध दलमलहिं 'बनारसि', वीतराग पूजा फल येह॥

卐

दो कन्यका बुधविहीन सु मालिनी की,
श्री जैन मन्दिर की देहली पूज नीकी।
सौधर्म इन्द्र पत्नी हुईं चारु वेषा,
इससे जिनेश पद-कंज जजो हमेशा॥

卐

गुरूपास्ति

साधू का पद दूर है, जैसे पेड़ खजूर।
चढ़े तो फल चाखन मिलें, गिरे तो चकनाचूर॥

卐

सच्ची लगन—

किसी बादशाह के एक रहीम नाम का मुसाहिब था। वह बादशाह की बेटी पर आसक्त हो गया। बादशाह की बेटी ने सलाह दी कि तुम फकीर बन जाओ, मैं वहां आकर तुमसे मिला करूँगी। आखिर रहीम फकीर बन गया

फकीर बनने के बाद गांव के लोग दर्शन करने आने लगे। एक दिन बादशाह भी गया और उसने चरणों में नमस्कार किया। यह देखकर उसने सोचा कि जिस पद को धारण करने पर बादशाह दर्शन करने आया है, यदि इसको सच्ची लगन से धारण करूं तो न जाने क्या क्या सुख मिलेंगे? बस, फकीरी से उसे सच्ची लगन हो गई। बाद में बादशाह की बेटी पहुँची और वह उसके गले से लिपटने लगी तो उसने उसे दूर करते हुए कहा—

प्यारी यारी ना करो, ना डालो गल बांह।
जो रहीम पहिले हते, ते रहीम अब नांह॥

卐

आत्मकल्याण की ओर—

दो भाई थे, उनमें से बड़ा भाई साधु हो गया। १२ वर्ष की कठिन तपस्या के बाद उसने जलतरन विद्या सिद्ध की। घूमते घूमते वह अपने गाँव में आया। वहाँ उसके छोटे भाई ने पूछा कि भाई! १२ वर्ष में आपने क्या पाया? साधु ने नदी पार करके बताया कि हमने यह विद्या सीखी है। उसके भाई ने नाव वाले को झट एक पैसा दिया और नदी पार होकर बोला भाई! आपने एक पैसे की विद्या सीखी है। यह सुनकर वह बहुत लज्जित हुआ और सच्चे आत्मकल्याण में लग गया।

卐

यह सुनकर मुनिराज ने अपने पांव के नीचे की धूल उठाकर सामने के पहाड़ पर फेंकी, तो वह पहाड़ सोने का हो गया! यह देखकर भर्तृहरि आश्चर्य चकित रह गये। तत्पश्चात् मुनिराज ने उन्हें सम्बोधित करते हुये कहा कि—भाई! यदि तुम्हें रसायन की चाह थी तो राजपाट काहे को छोड़ा? उनके उपदेशामृत को पान कर मय चेलों के वे जैन मुनि हो गये।

卐

स्वाध्याय

शास्त्र पठन उद्यम करो, वृद्ध काय पर्यन्त।
शास्त्र पढ़ें पहुँचे जहां, नहिं पहुंचे धनवन्त॥

卐

संदिग्धं हि परिज्ञानं गुरोर्प्रत्ययवर्जितम्।
गुरु के विना ज्ञान संदिग्ध रहता है।

[१]

भारत से एक मनुष्य चीनी मिट्टी के बर्तन बनाना सीखने को चीन देश को गया। वहां उसे एक उस्ताद ने बर्तन बनाना सिखाया। ज्योंही उसने बर्तन बनाना सीख लिया वैसे ही चुपचाप भारत चला आया। यहां आकर उसने बर्तन बनाकर भट्टी में पकाकर उन्हें भट्टी से निकालकर फूंक देकर जैसे ही बाहर रखना शुरू किया, वैसे ही वे चटक

चटक कर फूटने लगे। आखिर वह फिरसे छीन गया। अपने गुरु से कसूर की माफी मांगी और बर्तन चटकने का कारण पूछा। गुरु ने बताया कि भट्ठी में निकालकर बर्तन को फूंकना नहीं चाहिये, किन्तु कपड़े से झाड़कर रखना चाहिये। उसने वैसा ही किया और सफलता प्राप्त की।

[२]

शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये ॥

एक मूर्ख राजा था। उसके दरबार में अनेक विद्वान रहते थे। किसी समय काशी से एक धूर्त पण्डित आया, और राजा से कहने लगा-- आपके दरबार में जो विद्वान हैं वे प्रतिदिन रुपये का ध्यान करते हैं। राजा ने पूछा— यह कैसे ? तब उसने बताया कि—

राजा इस अर्थ को सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ और उसे खूब धन देकर विदा किया। थोड़ी देर बाद जब दरबारी विद्वान आये तब राजा ने उक्त श्लोक का अर्थ पूछा, परन्तु कोई भी विद्वान वैसा अर्थ न कर सका। तब राजा ने उन लोगों को सभा से निकाल दिया। कुछ दिनों के बाद वहां एक बुद्धिमान पंडित आये, उन्होंने उक्त श्लोक का अर्थ राजा को, दहीवड़ा बताया; और उसे यों घटित किया कि—

शुक्लाम्बरधरं=दहीवड़े पर सफेद दही चढ़ा रहता है इसलिए वह सफेद वस्त्र धारण किये हुए है; विष्णुं=(विष-प्रवेषणे) मुंह में डालते ही शीघ्रता से गले में उतर जाता है; शशिवर्णं=चन्द्रमा के समान सफेद है; चतुर्भुजम्=चतुर मनुष्यों का भोजन है; प्रसन्नवदनं ध्यायेत्=इसका ध्यान आते ही चेहरा प्रसन्न हो जाता है; सर्वविघ्नोपशांतये=खुश्की आदि सब रोग दूर हो जाते हैं।

यह अर्थ सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ, और उनको गुरु बनाकर उन्हीं से पढ़ने लगा। जब व्याकरण आदि सब पढ़ चुका और उस श्लोक का अर्थ लगाया तो न 'रुपया' ही अर्थ निकला और न 'दहीवड़ा'। क्योंकि इन अर्थों के करने पर विशेष्य कोई नहीं रहा, सब विशेषण हो गये। तब राजा ने गुरु से पूछा कि आपने इसका अर्थ दहीवड़ा कैसे किया था? गुरुजी ने उत्तर दिया कि यदि उस वक्त में इसका अर्थ

दृष्टांत बढ़ई न बताता तो आप मानते नहीं। सच है, ज्ञान होने पर ही यथार्थ बोध होता है।

[३]

राजा भोज के जमाने में ज्ञानार्जन का नमूना—

एक समय राजा भोज ने अपने नौकरों को हुक्म दिया कि जाओ अपने राज्य में से ऐसे आदमी को पकड़कर लाओ जो पढ़ा लिखा न हो। नौकरों ने बहुत तलाश की, परन्तु बिना पढ़ा लिखा कोई न मिला। अन्त में एक जुलाहे को जो कपड़ा बुन रहा था पकड़कर राजा के दरबार में हाजिर किया। राजा ने जुलाहे से पूछा कि तुम पढ़े लिखे हो? जुलाहे ने जवाब दिया—जी हां, हुजूर! राजा ने फिर पूछा कि क्या तुम कविता बना सकते हो? उसने जवाब दिया—

काव्यं करोमि नहि चारुतरं करोमि,
यत्नात् करोमि यदि चारुतरं करोमि।
सौवर्ण्यमौलिमणिमण्डितपादपीठ,
हे साहसांक कवयामि ? वयामि ? यामि ?

हे राजन्! मैं कविता बनाता हूँ, परन्तु श्रेष्ठतर नहीं बना पाता हूं। यदि यत्नपूर्वक बनाऊँ तो अच्छी भी बना सकता हूँ। हे मणियों से जटित मुकुट को धारण करनेवाले एवं स्वर्णमयी सिंहासन पर विराजमान महाराज! आज्ञा दीजिये कि मैं कविता करूँ; या बुनूँ या चला जाऊँ?

फिर फुर्र—

एक किसान ने धान की फसल तैयार होने पर उसे काटकर एक गढ़े में भरदी। ऊपर से मिट्टी पूर दी। उसमें एक चिड़िया ने छेद कर लिया। वह बार बार एक एक दाना निकालती और फुर्र करके उड़ जाती। थोड़ी देर बाद उस किसान का एक साथी आया, उसने चिड़िया का हाल उससे कहा कि चिड़िया एक दाना निकालती है और फुर्र.........। तब सुनने वाले ने कहा—फिर क्या हुआ? तब वह फुर्र को दोहराता है। इस प्रकार कुछ देर तक उनकी फिर्र...फुर्र होती रही। आखिर में सुनने वाला कहता है कि भाई, तुम्हारी फुर्र पूरी नहीं होती। यह सुनकर किसान बोला भाई, जब तक तुम्हारी फिर्र पूरी नहीं होती, तब तक हमारी फुर्र कैसे पूरी हो सकती है? कहने का मतलब यह है कि हम और आप व्यर्थ की बातोंमें समय व्यतीत करते हैं, उसके बजाय यदि शास्त्र स्वाध्याय में मन लगावें तो आत्म-कल्याण कर सकते हैं।

एक चरण हू नित पढ़े तो काटे अज्ञान।
पनिहारी की लेज से सहज कटे पाषान॥

卐

जैन वैन और वैन में अन्तर—

कैसे कर केतकी कनेर इक कही जाय,
आक दूध गाय दूध, अन्तर घनेर है।

पीरी होत रोरी[1] पै न रीस करे कंचन की,
कहां काग वानी, कहां कोयल की टेर है ॥
कहां भानु भारो, कहां आगियो[2] विचारो,
कहाँ पूनो को उजारो, कहां अमावस अंधेर है।
पच्छ छोर पारखी, निहारो नेक नीको कर,
जैन बैन और बैन इतनो ही फेर है ॥

नोट—देवपूजा, गुरूपास्ति और स्वाध्याय के सम्बन्ध में यहां कहा गया है। अब संयम, तप और दान के सम्बन्ध में आगे १० धर्म के वर्णन में देखिये।

卐

उत्तम क्षमा

"सत्यपि सामर्थ्ये अपकारसहनं क्षमा ।"

सामर्थ्य होने पर भी दूसरों के द्वारा किये गये अपकार को सहन करना क्षमा है।

अथवा—

"दुष्टजनाक्रोशप्रहसनावज्ञाताडनशरीरव्यापादनादीनां सन्निधाने कालुष्यानुत्पत्तिः क्षमा ।"

अर्थात्—दुष्ट मनुष्यों द्वारा निन्दा, गाली, हास्य, अनादर, मारन तथा शरीरघात करने को उद्यत होने पर भी कलुषित भावों का न होना उत्तम क्षमा है।

१—पीतल, २—जुगनू ।

कोपः करोति पितृमातृसुहृज्जनाना-
मप्यप्रियत्वमुपकारि जनापकारम् ।
देहक्षयं प्रकृतकार्यविनाशनं च,
मत्वेति कोपवशिनं न भवन्ति भव्याः ॥

क्रोध करनेवाले के माता पिता और भाई-बन्धु आदि अप्रिय हो जाते हैं। क्रोधी उपकारी के उपकार को भूल जाता है। शरीर कृश हो जाता है एवं प्रयोजनभूत कार्य नष्ट हो जाते हैं, ऐसा मानकर भव्य जीव क्रोध के वशीभूत नहीं होते।

क्रोध कर मरे और मारे तो फांसी होय,
किंचित हू मारे तो जाय जेलखाने में।
जो कहूं निवल भयो हाथ पैर टूट गये,
ठौर ठौर पट्टी बँधी पड़े सफाखाने में॥
पीछे से कुटुम्बीजन हाय हाय करत फिरत,
जाय जाय पांव परें तहसील और थाने में।
किंचित हू किये तें क्रोध, एते दुख होय भ्रात,
होते हैं अनेक गुण जरा गम्म खाने में॥

卐

गम खाना बड़ी चीज है—

किसी नगर में एक सेठ रहते थे। उनको सट्टे में घाटा हो गया, इसलिये वे अपनी स्त्री के साथ ससुराल को चले।

रास्ते में सेठानी ने सोचा कि इस तरह जाने में अनादर होगा, इसलिए किसी छल से सेठ जी को मार डालना चाहिए। कुछ दूर चलने पर आगे एक कुआँ मिला, उसे देखकर सेठानी बोली कि मुझे प्यास लगी है। जब सेठ पानी खींचने लगे तो उसने पीछे से धक्का दे दिया और फिर पीहर पहुँचकर अपने पति के मरने के समाचार सुनाकर रो-धोकर वहीं रहने लगी। उधर कुआँ में सांकल को पकड़कर लटके सेठ को एक बनजारे ने निकाला, और उसे अपने साथ ले गया। सेठ ने परदेश में उसके साथ रहकर अतुल धन कमाया। इसके बाद ससुराल जाकर अपनी स्त्री को लिवाकर घर आ गया। कुछ दिन बाद उनके बाल बच्चे हो गये। एक लड़के का विवाह कर लिया।

एक दिन सेठ चौके में भोजन कर रहे थे, ऊपर से उनकी थाली में सूरज की रोशनी का चिल्ला पड़ रहा था, उसे सेठानी ने अपने अंचल से रोका। यह देख सेठ मुस्कराया। सामने उसकी बहू खड़ी थी, उन्हें मुस्कराते देख बहू ने इसका कारण जानना चाहा। अन्त में लड़के ने अपने पिता से सारा वृतान्त (कुँए में गिराने का) जानकर अपनी स्त्री को बता दिया। घर सास बहू में खटपट रहती थी। एक दिन बहू ने सास से ताने में वह बात कह दी, जिसे सुनकर सास फांसी खाकर मर गई। जब सेठ घर आया तो गम खाकर उसका दाह संस्कार किया और बहू को समझाया कि देख

बेटी! तूने गम नहीं खाई, इसलिये कितना अनर्थ हो गया। यदि मैं तेरी तरह गम न खाता तो आज यह सब माया न होती।

卐

क्षमाबलमशक्तानां शक्तानां भूषणं क्षमा।
क्षमावशीकृते लोके क्षमया किं न सिध्यति॥

क्षमा असमर्थों को बल देने वाली और समर्थ जनों की भूषण है। क्षमा के द्वारा संसार वश में कर लिया जा सकता है। क्षमा से क्या क्या सिद्ध नहीं होता?

卐

मुनि और धोबी

एक तालाब के किनारे वाली शिला पर कोई मुनि ध्यान कर रहे थे। थोड़ी देर बाद कपड़ा धोने के लिये वहां एक धोबी आया। उसने कपड़े उतार कर रख दिये और मुनि से कहने लगा कि ये हमारी शिला है, इस पर से दूर हट जाओ। जब मुनि कुछ नहीं बोले तो धोबी गालियां देने लगा। मुनि ने भी वैसा ही जवाब दिया। अन्त में दोनों में लड़ाई होने लगी। लड़ते लड़ते धोबी का लंगोटा छूट गया, और दोनों एक से-नंगे हो गये। मुनि की पुकार पर देव रक्षा के लिये दौड़े आये। मगर वहां आकर वे वहीं चुपचाप खड़े देखते रहे। अन्त में बीच बचाव होने पर वे अलग

साधु उसे न पहचान सका, बोला—आज सेठानी क्यों नहीं आईं ? सेठानी ने उत्तर दिया—

यौवन था तब रूप था, थे गाहक सब लोय ।
यौवन रत्न गयो पुनः, बात न पूछे कोय ॥

यह कहकर उसने वह खून का लोटा साधु के सामने रख दिया और बोली कि महाराज ! आप इस पर मोहित थे, इसलिये जाओ । यह सुनकर साधु लज्जित हुआ और यथार्थता का अनुभव कर क्षमा याचना करने लगा ।

卐

रूप की परिवर्तनशीलता

एक समय इन्द्र ने रूप की प्रशंसा करते हुए अपने सभासदों से कहा कि इस समय मनुष्य लोक में चक्रवर्ती सनत्कुमार अत्यन्त सुन्दर रूपवान हैं । इस बात को जानने के लिए दो देव उन्हें देखने आये । जब देव उनके पास पहुँचे तब चक्रवर्ती स्नान कर रहे थे । उस समय देवों ने उनके रूप को वैसा ही देखा जैसा इन्द्र ने कहा था । देवों ने चक्रवर्ती के रूप की प्रशंसा की । उसे सुनकर चक्रवर्ती ने कहा कि आप लोग राजदरबार में जाकर देखें । आध घन्टे बाद जब देव वहां पहुंचे तो उनका वैसा रूप न देखकर वे बोले - हे राजन् ! जो रूप उस समय था वह अब नहीं है ।

नमस्कार के प्रकार—

नमोऽस्तु गुरवे कुर्याद्वंदना ब्रह्मचारिणे ।
इच्छाकारं सधर्मिभ्यो वंदामीत्यार्यिकादिषु ॥
श्रावका परस्परं कुर्युः इच्छाकारं स्वभावतः ।
जुहारुरिति लोकेऽस्मिन् नमस्कारं स्वजातिनः ॥

गुरु के लिये 'नमोस्तु', ब्रह्मचारी के लिये 'वन्दना', सधर्मियों के लिये श्रावक को 'इच्छामि', आर्यिका को 'वंदामि', परस्पर में 'दर्शनविशुद्धि' व बराबरी के भाइयों से 'जुहारु' या 'नमस्कार' करना चाहिये ।

卐

उत्तम आर्जव

"ऋजोर्भावः आर्जवम् ।"

सरल भावों का होना आर्जव धर्म है ।

अथवा—

'योगस्यावक्रता आर्जवम् ।"

मन, वचन, काय, इन तीनों योगों की कुटिलता का अभाव होना उत्तम-आर्जव है ।

कपट—कथा

किसी गांव में एक धर्मात्मा सेठ रहते थे । उनके यह नियम था कि उनके गांव में कोई भी साधु ब्रह्मचारी या

अतिथि आ जावे तो उन्हें वे भोजन कराते थे। इस बात से सेठानी को रोटी बनाने की बड़ी तकलीफ रहती थी। एक दिन एक ब्रह्मचारी दिन में करीब एक बजे आये। सेठ जी उन्हें साथ में लेकर घर पर लाकर सेठानी से बोले— इन्हें भोजन बनाकर जिमाओ। सेठानी ने बहाना बनाकर कहा कि घी नहीं है, बाजार से ले आओ। सेठ जी घी लेने चले गये। इधर सेठानी जी ने ब्रह्मचारी जी से कहा कि सेठ जी में और तो सब गुण अच्छे हैं, परन्तु भोजन कराने के बाद वे (मूसल दिखाकर) इस मूसल से मारते हैं। यह सुनकर ब्रह्मचारी ने सोचा कि ऐसा है तो यहाँ से चलना चाहिये। और वे भोजन किये बिना ही चल दिये। थोड़ी देर बाद घी लेकर सेठ जी घर आये तो ब्रह्मचारी जी को वहां न देखकर, सेठानी से पूछा कि वे ब्रह्मचारी जी कहाँ चले गये ? सेठानी बोली कि वे यह मूसल मांगते थे, मैंने कहा यह मूसल तो मेरे पीहर से आया है, इसे मैं नहीं दूंगी। इस पर वे नाराज होकर चले गये। यह सुनकर सेठ ने कहा कि वाह ! मूसल दे देतीं। यह कह मूसल उठाकर उसे देने चल पड़े। ब्रह्मचारी ने सेठ को मूसल लिये आता देख सोचा कि इसने भोजन भी नहीं कराया और मूसल लेकर पीटने आ रहा है। वे भागे। आगे आगे ब्रह्मचारी जी पीछे पीछे सेठजी को दौड़ते लोगों ने देखा। अन्त में सेठानी को मायाचारी जानकर लोगों ने सेठानी की बड़ी निन्दा की।

[illegible]

अरकनिया के पुत्र नहीं, नहीं गांठ के दम्त ।
जे नर मीठे बोलहीं, तिनसे बिके कन्त ॥

卐

"जो कोई कूप खने औरन को, ताको खाई है तैयार ।"

किसी जगह पर बहुत से बालक खेल रहे थे । उनमें से एक बालक दूसरे बालकों से उक्त लोकोक्ति को कह रहा था । उसे उधर से जाते हुये राजा के मन्त्री ने सुना । उस बालक को होनहार समझ कर वह उसे अपने घर पर ले गया । वहाँ वह बड़ा हो गया । एक दिन राजा ने मन्त्री

1—भाग्य ।

से तीन बातें पूछी। १- ईश्वर का रंग कैसा है ? २- वह कहाँ रहता है ? ३-वह क्या करता है ? मन्त्री ने इसके उत्तर को ७ दिन की अवधि मांगी। दिन पूरे होने आये पर उत्तर न आया। उस लड़के ने मन्त्री को उदास बैठे देख, उदासी का कारण पूछा। मन्त्री ने राजा के तीनों प्रश्न बताये। उसके उत्तर लड़के ने इस प्रकार बतलाये—१-एक रंग विरंगे फलों की डाली सजाओ, उसका जो रूप हो वैसा ईश्वर का रंग है। २-वह सब जगह रहता है। ३-वह सुख दुख देता है।

सातवें रोज मन्त्री राजसभा में पहुंचा और राजा को उनके प्रश्नों का उत्तर देने लगा। दो प्रश्नों के उत्तर तो वह दे चुका, परन्तु तीसरे प्रश्न का उत्तर भूल गया। मन्त्री को चुप देखकर राजा ने पूछा कि मन्त्री जी ! यह बताओ कि इन प्रश्नों के उत्तर तुम्हें किसने बताये ? तब मन्त्री ने उस लड़के को बुलाकर राजा के सामने उपस्थित किया। राजा ने वे ही तीन प्रश्न लड़के से पूछे। ऊपर के दो प्रश्नों के उत्तर दे चुकने के बाद तीसरे प्रश्न का उत्तर देते समय मन्त्री को कुर्सी पर से उठाकर झट आप बैठ गया, और बोला— महाराज ! ईश्वर यह करता है। अर्थात् सुख-दुख देता है। यह सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ, और उसे मन्त्री का पद देना स्वीकार किया। इधर मन्त्री ने देखा कि यह तो अच्छा नहीं हुआ, इसे किसी बहाने से मरवा डालना चाहिए। निदान एक भड़भूजे को बुलाया—और कहा कि देखो, हम तुम्हें

१००) रु० देंगे, जो लड़का आज चना भुनाने आवे उसे भाड़ में भूंज देना। मन्त्री ने उस लड़के को चना भुनाने भेजा। रास्ते में मन्त्री का लड़का जो स्कूल में खेल खेल रहा था वह थक गया था, इसे जाते देख बोला कि भाई, मैं थक गया हूँ, तुम मेरी तरफ से खेल खेलना, चना मैं भुना लाऊँगा। ऐसा ही हुआ। और मन्त्री का लड़का भाड़ में भुंज गया। पीछे जब मन्त्री को हाल मालूम हुआ तो वह बहुत पछताया। उसे पछताते देख लड़का बोला कि चाचा जी, आप भूल गये कि 'जो कोई कूप खने............।

卐

उत्तम शौच

"शुचेर्भावः शौचम्।"

शुचि=पवित्र=निर्लोभ परिणामों का होना शौच है।

अथवा—

"प्रकर्षप्राप्तलोभान्निवृत्तिः शौचम्।"

उत्कृष्ट लोभ से निवृत्ति होना उत्तम शौच है।

लोभाविष्टो नरो वित्तं, वीक्ष्यते न स चापदम्।
दुग्धं पश्यति मार्जारो, यथा न लगुड़ाहतम्॥

लोभी मनुष्य धन को देखता है, किन्तु उससे आने वाली विपत्ति को नहीं देखता। जैसे—बिल्ली दूध को देखती है, परन्तु लाठी से होने वाले प्रहार को नहीं देखती।

卐

उतारने को कहा, बहुत आरजू मिन्नत की, तब ज्योंही सवार ने घोड़े पर खड़े होकर नीचे वाले के पैर पकड़े कि घोड़ा आगे चल दिया। अब तीनों लटके रह गए। घुड़सवार ने भी ऊपर वाले लालची से कहा कि भाई, मजबूती से पकड़े रहना, मैं तुम्हें ५०) रु० दूंगा। यह सुनकर लालची ने सोचा कि अब तो मेरे पास १५०) रु० हो जावेंगे। उनको रखने के लिये (दोनों हाथ छोड़कर) इतनी बड़ी थैली की जरूरत पड़ेगी, ऐसा कहते ही तीनों धड़ाम से नीचे गिरे। सबको चोटें आईं। और दोनों सवारों ने उस लालची को बुरी तरह से पीटा।

लोभी को सूम कहते हैं। एक सूम ने किसी सेठ को एक संस्था के प्रचारक के लिए चन्दा देते देखा, जिससे उसे बहुत दुख हुआ। और वह मलिन मुख किए घर आया। उसे इस प्रकार देखकर—

नारी पूछे सूम की, काहे वदन मलीन।
कहा तुम्हारो गिर गयो, के काहू को दीन॥

सूम कहे नारी सुनो, गिरो न कछु मैं दीन।
देतन देखो और को, तासों वदन मलीन॥

卐

प्रिय वचन बोलने से सभी प्राणी सन्तोषित होते हैं इसलिये सत्य वचन बोलना चाहिए। भला, वचनों में दरिद्रता कैसी ?

> सांच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
> जाके हिरदे सांच है, ताके हिरदे आप ॥

卐

झूठा मृतक समान--

किसी पारधी के घर के सामने एक वृक्ष था। उस पर एक कौआ प्रतिदिन आकर बैठता था। जब जब कौआ आता तब तब वह पारधी अपने लड़के से कहता था कि ला बेटा तलवार उठा ला। जब लड़का तलवार उठाकर लाता तो कौआ उड़ जाता। एक दिन पारधी ने अपने पास धनुषबाण रख लिया। जब कौआ आया तो बोला, ला बेटा तलवार उठा ला। ऐसा कहकर कौए को बाण मार दिया। जिससे कौआ नीचे गिर पड़ा। यह देखकर पारधी बोला कि आज तो मर गया। यह सुनकर—

> कहे काग सुन पारधी, काग मरा मत जान।
> मुझसे पहिले तू मरा, असि कहि छोड़ा बान ॥

卐

गाली—

> गाली आवत एक है, जावत होय अनेक।
> जो गाली फेरे नहीं, रहे एक की एक ॥

एक बार कुछ विद्वान लोग घूमने जा रहे थे। रास्ते में कुछ मूर्ख मिले, और उन्हें गालियां देने लगे। उनमें से एक विद्वान ने उत्तर दिया—

ददतु ददतु गालीं गालिवन्तो भवन्तः,
वयमिह तदभावाद् गालिदानेऽक्षमर्थः।
जगति विदितमेतद् विद्यमानं प्रदेयम्,
नहि शशकविषाणं कोऽपि कस्मै ददाति।

आप गाली वाले हैं इसलिए खूब गालियां दो। उन गालियों का हमारे पास अभाव है, इसलिए हम गाली देने में असमर्थ हैं। संसार में यह प्रसिद्ध है कि जो किसी के पास कुछ होता है, वह उसे देता है। खरगोश के सींग नहीं होते इसलिए वे किसी को दिए नहीं जाते।

卐

कहे एक इन्सान सुनले जब दो।
कि हक ने जवां एक दो कान दो॥

●

फितरत को नापसन्द है सख्ती जबान में।
पैदा हुई न इसलिये हड्डी जबान में॥

●

नहीं मालूम की आजाद रहकर क्या सितम ढाती।
कि इन बत्तीस दांतों की हिफाजत में जवां रखदी॥

जीभ और दांत—

एक बार जीभ और दांतों में झगड़ा हुआ। दांतों ने जीभ से कहा कि तू ज्यादा बाक बक मत कर, नहीं तो हम तुझे बीच में रखकर चगड़ डालेंगे। यह सुनकर जीभ ने जवाब दिया कि खबरदार ! ज्यादा बात मत करो, नहीं तो मैं ऐसी एक बात कह दूंगी कि तुम बत्तीसों को तुडवा डालूंगी।

रहिमन जिह्वा बावरी, कह गई सुरग पाताल।
आप तो कह भीतर भई, जूती खाय कपाल॥

卐

सार्थक मौन—

एक साधु जंगल में तपस्या कर रहे थे। एक दिन एक शिकारी शिकार खेलने उस जंगल में आया और उसने एक हरिण का पीछा किया। हरिण साधु के सामने से निकल गया। बाद में पीछे से पूछने लगा कि क्या बाबाजी, एक हरिण इधर से भागता हुआ निकला ? साधु जी मौन रह गये। जब उसने दो तीन बार पूछा तो साधु ने उत्तर दिया—

या पश्यति सा न ब्रूते, यः ब्रूते सः न पश्यति।
अहो व्याध स्वकार्यार्थी, किं पृच्छसि पुनः पुनः॥

जो (आंख) देखती है वह बोलती नहीं है, जो (मुंह)

[illegible]
[illegible]

[illegible] जब मालूम हुआ कि [illegible] से कोई घोड़ा [illegible] ले गया है, तो [illegible] वह चोर मिल गया। [illegible] ने पूछा कि तुम कौन हो? उसने कहा—मैं चोर हूँ। [illegible] आज रात को तूने कौनसी चोरी की है? चोर : आज रात को राजा का लाल रंग का घोड़ा चुराया है। [illegible] वह कहाँ है? चोर ने जब जंगल में वह घोड़ा बता दिया, परन्तु घोड़े का रंग सफेद था। उसे पकड़कर राजा के सामने उपस्थित किया। राजा के सामने भी उसने सच सच कहा। राजा ने पूछा कि तू लाल रंग का घोड़ा बताता है, लेकिन यह सफेद क्यों? उसने जवाब दिया कि मैंने तो लाल रंग का ही घोड़ा चुराया है। तब वन-देवता ने प्रगट होकर कहा कि इसकी परीक्षा लेने के हेतु रंग मैंने बदल दिया है। यह सुनकर, उसकी सत्यता पर प्रसन्न होकर राजा ने उसे एक गाँव लगा दिया। चोर ने सोचा कि एक रात के इस सत्य व्रत से इतना लाभ हुआ तो अब चलकर उन्हीं गुरु की शरण में जाना चाहिये। और अन्त में वह मुनि हो गया।

卐

सत्य की महिमा—

पावक तें जल होय, वारिधि तें थल होय,
शस्त्र तें कमल होय, ग्राम होय बन तें।

एक भौंरा शाम के समय कमल के फूल में बंद हो गया। फिर वह सोचता है कि

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातम्,
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पंकजश्रीः।
इत्थं विचिन्तयति कोशगते द्विरेफे,
हा, हन्त हन्त, नलिनीं गज उज्जहार॥

रात्रि अभी जायेगी, सवेरा होगा, सूर्य का उदय होगा, फूल खिलेंगे और मैं उड़ जाऊँगा। फूल में बन्द भौंरा इस प्रकार सोच रहा था, परन्तु दुःख है कि इतने में एक हाथी आया और वह उस कमल को तोड़कर खा गया।

५।

अपनी चिन्ता करो—

किसी छेवले (पलाश) के पेड़ के नीचे एक मुनिराज ध्यान कर रहे थे। उन्हें उस पेड़ के नीचे अधिक दिन हो गये, पर कोई लाभ नहीं हुआ। वे वहाँ से चलकर इमली के पेड़ के नीचे आकर तपस्या करने लगे। उधर श्रावकों ने केवली के समोशरण में जाकर उन मुनि के आगे के भव पूछे, तो केवली ने बताया कि वे इस समय जिस पेड़ के

तापर और रचें रस-काव्य, कहा कहिये इनकी निठुराई,
अन्ध असूझन को अँखियान में, झोंकत हैं रज राम दुहाई ॥

⊙

जो विषया सन्तन तजी, मूढ़ ताहि लिपटात ।
ज्यों नर डारे वमन कर, श्वान स्वाद सों खात ॥

⊙

तिलतैलमेव मिष्टं, येन न दृष्टं घृतं क्वापि ।
अविवितपरमानन्दो, जनो वदति विषय एव रमणीयः ॥

जिसने कभी घी न देखा हो, उसे तिल का तैल ही मीठा लगता है। जो परम निजानन्द से अनभिज्ञ हैं उन्हें विषय-भोग ही आनन्ददायक मालूम होते हैं।

卐

उत्तम-तप

"इच्छानिरोधस्तपः ।"

इच्छाओं को रोकना तप है।

अथवा--

"कर्मक्षयार्थं तप्यत इति तपः ।"

कर्मों को क्षय करने के लिये तपा जाय सो उत्तम
।

दिया। फिर राजा से कहा कि जब तुम्हारे पास कोई काम न हो तो भूत को हुक्म दे दिया करो कि वह इस खम्भे पर चढ़ा उतरा करे। ऐसा करने से राजा को शांति मिल गई। कहने का मतलब यह है कि—मन एक भूत के समान है, उसे तप रूपी खम्भे पर चढ़ाओ उतारो, जिससे शांति प्राप्त हो।

卐

मन मर्कट मधुकर मरुत, मत्त मानिनी मीन।
मा अरु मन्मथ ये नवों, चपल मकार प्रवीन॥

१ मन, २ वन्दर, ३ भ्रमर, ४ हवा, ५ पागल, ६ अभिमानी स्त्री, ७ मछली, ८ लक्ष्मी और ९ कामदेव; ये नव मकार चपल हैं।

卐

तप की महिमा—

ज्यों वर कानन दाहन की, दव पावक सौं नहिं दूसरो दीसे।
जो दव आग बुझै न तत्क्षण, जो न अखण्डित मेघ वरीसे॥
ज्यों प्रगटे नहिं ज्यों लग मारुत, त्यों लग घोर घटा नहिं खीसे।
त्यों घट में तप वज्र विना, दृढ़ कर्म कुलाचल और न पीसे॥

卐

आचार्य समन्तभद्र—

श्री १०८ आचार्य श्री समन्तभद्र स्वामी को जब भस्मक व्याधि रोग हो गया, तब उस रोग को शमन करने के हेतु

से विहार करते बनारसी नगरी के राजकीय महादेव के मन्दिर में जहाँ १।ऽ मन का भोग लगता था वहाँ जाकर पण्डा बनकर रहे। वे न महादेव को नमस्कार करते न उन्हें भोग ही लगाते, किन्तु भोग स्वयं पा जाते थे। राजा ने सोचा कि महादेव प्रसन्न हो गये हैं, जो १।ऽ मन का भोग खा जाते हैं। कालांतर में ज्यों ज्यों व्याधि शांत होने लगी, त्यों त्यों भोग बचने लगा। राजा ने इसका कारण जानने के हेतु फूलों की डाली में एक बच्चे को छिपाकर उससे सारा भेद मालूम कर लिया। राजा ने आकर आचार्य श्री से कहा कि तुम्हें महादेव को नमस्कार करना पड़ेगा। यह सुनकर उन्होंने जवाब दिया कि राजन् ! ये महादेव की पिण्डी हमारे नमस्कार को नहीं झेल सकेगी। निदान इसकी परीक्षा हेतु एक दिन नियत हो गया। लाखों की तादाद में जनसमूह इस कौतूहल को देखने के लिये एकत्रित हुआ। पिण्डी लोहे के तारों से जकड़ाकर उच्च स्थान पर रखी गई। सामने आचार्य श्री ने विराजमान होकर 'स्वयंभू स्तोत्र' का पाठ रचना प्रारम्भ किया। ज्योंही उन्होंने—

प्रातिहार्यातिशयप्रपन्नो, गणप्रवीणो हतदोषसंगः।
लोकमोहान्धतमप्रदीपश्चन्द्रप्रभं तं प्रणमामि भावात् ॥

यह श्लोक बोलकर नमस्कार किया त्यों ही श्री १००८ श्री चन्द्रप्रभु स्वामी की प्रतिमा, पिण्डी में से निकल आई।

यह आश्चर्य सभी ने देखा और श्रद्धा से उन चन्द्रप्रभु स्वामी की सभी ने मिलकर जय बोली। और राजा ने जैनधर्म धारण किया।

श्रीमत स्वामि समन्तसुभद्र, सुराय करी जब वन्दन मेरी
ध्याय श्वयंभू पाठ रच्यो, गुरु गर्वित स्यादरुवाद घनेरी
शम्भू की पिण्डिका फोड़ कढ़ी, द्युतिचंद्र जिनेन्द्र सुवंद्यत वेर
क्यों न द्रवो भवसंकट पै, अब श्रीपतजी पत राखहु मेरे

卐

उत्तम-त्याग

"त्यजतीति त्यागः।"

स्वपर कल्याण के लिये देना सो त्याग है।

अथवा—

"संयतस्य योग्यं ज्ञानादिदानं त्यागः।"

संयमी के योग्य ज्ञानादिक का देना सो उत्तम त्याग है।

त्याग एको गुणश्लाघ्यः, किमन्यैः गुणराशिभिः।
त्यागाज्जगति पूज्यन्ते, पशुपाषाणपादपाः॥

त्याग ही एक सर्वश्रेष्ठ गुण है, अन्य गुणों से क्या प्रयोजन है? त्याग के ही कारण संसार में पशु, पाषाण और वृक्ष पूजे जाते हैं।

आपदर्थे धनं रक्षेत्—

राजा भोज बडे दानी थे! उनके दान को देखकर उनका मंत्री घबड़ाया। वह सोचने लगा कि महाराज इसी प्रकार

परन्तु लक्ष्मी नहीं आई, तो निराश होकर नौकरी तलाशने की गरज से एक सेठ के यहां पहुँचा। वहाँ सेठ जी एक चांदी के पीकदान में थूक रहे थे। सेठ जी को थूकते देख-कर उसे बहुत गुस्सा आया। सेठ ने पूछा कि कहो कैसे आये हो? ब्राह्मण ने जवाब दिया कि नौकरी की गरज से आपके पास आया हूँ। यह सुनकर सेठ जी चुप हो रहे। सेठ को पीकदान में बार बार थूकते देख ब्राह्मण से न रहा गया। उसने उठकर पीकदान में एक लात मारी और कहने लगा—"रंडे! यहीं थुकवाने आई, मैंने वर्षों तुम्हारी पूजन की, वहाँ नहीं आई।" कहने का मतलब यह है कि-लक्ष्मी पुण्य की दासी है।

卐

गौरवं प्राप्यते दानान्नतु वित्तस्य संचयात्।
स्थितिरुच्चैः पयोदानाँ पयोधीनामधः स्थितिः॥

दान देने से गौरव प्राप्त होता है न कि धन संचय करने से। मेघ (पानी बरसते हैं इसलिये वे) ऊ रहते हैं, किन्तु समुद्र (नित्य पानी का संचय करते इसलिए) नीचे रहते हैं।

卐

ध्यानेन शोभते योगी, संयमेन तपोधनः।
सत्येन वचसा राजा, गृही दानेन शोभते॥

पंडित और वेश्या—

एक सेठ जी के लड़के का विवाह था। उसमें उन्होंने एक रण्डी बुलाई और विवाह कराने के लिये पंडित मनीराम जी को बुलवाया। जब विवाह हो चुका तो रण्डी को विदा में ३००) दिये और पण्डित जी को ३०) रु० दिये। बगल में एक सज्जन बैठे थे, उन्होंने पण्डित जी से पूछा-आपको क्या भेंट मिली? यह सुनकर पण्डित जी ने कहा—

फूटी आंख विवेक की, कहा करें जगदीश।
चन्द्रकला को तीन सौ, मनीराम को तीस॥

●

मान बढ़ाई कारने जे धन खरचें मूढ़।
मरकर हाथी होंयेंगे, धरनी लटके सूंढ़॥

卐

वेश्या और भांड—

किसी नगर में एक मुनिराज का पदार्पण हुआ। एक दिन राजा ने नवधा-भक्तिपूर्वक उन्हें आहार दिया। जिससे देवताओं ने पंचाश्चर्य बरसाये। यह बात एक वेश्या ने सुनी। उसने सोचा कि यदि मैं भी उन नंगे साधु को भोजन कराऊँ तो मेरे यहां भी रतन बरसेंगे। उसने भांड़ों की सलाह से गंगाजी के किनारे हलुआ पूड़ी बनवाया। किसी एक भांड़ ने सोचा कि यदि मैं नंगा होकर आज वहाँ जाऊँ तो खूब

सन्मान दान—

न रणे विजयाच्छूरो, अध्ययनात् न च पण्डितः।
न वक्ता वाक्यपटुत्वेन, न दाता चार्थदानतः॥
इन्द्रियाणां जयेच्छूराः, धर्मं चरति पण्डितः।
हितप्रायोक्तिभिः वक्ता, दाता सन्मानदानतः॥

रण में विजय पाने वाला शूर नहीं है, किन्तु इन्द्रियों पर जय पाने वाला शूरवीर है। पढ़ने मात्र से पंड़ित नहीं होता, किन्तु धर्म को पालन करने वाला पंडित है। वचनों की चतुराई वाला वक्ता नहीं हैं. किन्तु हितकारी वचन बोलने वाला वक्ता है। धन का दान करने वाला दाता नहीं है, किन्तु सन्मान दान करने वाला दाता है।

●

ऋतु वसन्त याचक भये, हर्ष दिये द्रुम पात।
यातें नव पल्लव भये, दियो व्यर्थ नहिं जात॥

卐

पानी बाढ़ै नाव में, घर में बाढ़ै दाम।
दोनों हाथ उलीचिये, यह सज्जन का काम॥

卐

उत्तम आकिंचन्य

"न किंचनः इति अकिंचनः।"

मेरा कुछ नहीं, इस प्रकार के भाव को आकिंचन्य कहते हैं।

अथवा—

"उपात्तेष्वपि शरीरादिषु संस्कारापहाय ममेदमित्य भिसन्धिनिवृत्तिराकिञ्चन्यम् ।"

विद्यमान शरीरादिक में भी संस्कार के त्याग के लिये मेरा यह है ऐसे अनुराग की निवृत्ति उत्तम आकिंचन्य है।

卐

यतो न किंचित् परतो न किंचित्,
यतो यतो यामि ततो न किंचित् ।
विचार्य पश्यामि न किंचिदेतत्,
स्वात्मावबोधादधिकं न किंचित् ॥

यहां कुछ नहीं है, दूसरी जगह कुछ नहीं है, जहां जहां जाता हूँ वहाँ कुछ नहीं है। विचार कर देखता हूँ तो कहीं कुछ नहीं है, अपने आत्मावोध से अधिक कहीं कुछ नहीं है।

卐

"मूर्च्छा परिग्रहः"—यह मेरा है, इस प्रकार का भाव ही परिग्रह है।

बकरी मैं मैं करत ही, मरकर हो गई तांत ।
तैं तैं कर अब कर रही, मैं मत करना भ्रात ॥

चाहत है धन होय किसी विध,
सो सब काज सरें जिय राजी।
गेह चिनाय करूं गहना,
कुछ ब्याह सुता-सुत बांटिये भाजी॥
चिंतित यों दिन जांहि चले,
जम आन अचानक देत दगा जी।
खेलत खेल खिलारि गये,
रह जाय रुपी शतरंज की बाजी॥

卐

दोनों हाथ खाली थे

यूनान के बादशाह सिकन्दर ने दुनियां भर की सम्पति एकत्रित की, परन्तु वह आखिरी वक्त साथ में कुछ नहीं ले जा सका। कहते हैं—

वक्त मरने के सिकन्दर ने तबीबों[1] से कहा।
मौत से मुझको बचाओ करके कुछ मेरी दवा॥
सर हिलाकर यों कहा सबने कि अय शाहेजहाँ।
मौत से किसको पनाह[2] क्या है दरमाने[3] कजा[4]॥
बरगुजीदा[5] हस्तियों से फिर हुआ यों हमकलाम[6]।
है कोई इस वक्त महफिल में मेरा मुश्किलकुशा[7]॥

फील[1] हों हौदे सजे और अस्प[2] हों वाजीन साथ।
कुल रिसाला[3] हो मसल्ला[4] साथ हों सारी सिपाह॥
कुल रियाआ बूढ़े बच्चे और जवां सब साथ हों।
हो जनाजे[5] का हमारे रहनुमा छोटा बड़ा॥
बादे मुर्दन कफन के बाहर मेरे दो हाथ हों।
देखलें ता खल्क मुझ को साथ में क्या ले चला॥

यह दृश्य देखकर एक और कवि कहता है—

मुहय्या गर्चे सब सामान मुल्की और माली थे।
सिकन्दर जब चला दुनियां से दोनों हाथ खाली थे॥

卐

ढोंगी साधु या स्वादु ?

एक अन्धे साधु थे। उनके मूर्च्छा अधिक थी। उन्होंने भीख मांग मांगकर एक सोने की ईंट बनवा ली। एक गांव से दूसरे गाँव को चलते चलते जब दिन थोड़ा रह जाता तो चेला से पूछते कि बेटा! गाँव कितनी दूर है ? चेला पूछता कि बाबा जी, क्यों ? साधु कहते कि डर है। इस तरह बीस-पच्चीस रोज हो गये। चेला उनके इस वर्ताव से तंग आ गया। उसने सोचा कि इस ईंट की वजह से बड़ी परेशानी खड़ी हो गई है। उसने वह ईंट लेकर कुयें में

१ हाथी, २ घोड़ा, ३ सेना, ४ सुसज्जित, ५ अर्थी।

भाई को मार डालूँ। वह रत्न उस भाई ने अपने दूसरे भाई को दे दिया तो उसके भी ऐसे ही भाव हुए। निदान वह रत्न घर में सबके पास घूमा और जिस जिसके पास वह पहुँचा उसी के भाव खोटे होते चले गये। तब एक मुनिराज से इसका कारण पूछने पर वह रत्न इसका कारण निकला। इससे दोनों भाइयों को विरक्ति हो गई और वे मुनि हो गये।

卐

उत्तम ब्रह्मचर्य

"ब्रह्मणि आत्मनि चरतीति ब्रह्मचर्यम् ।"

ब्रह्म कहिये आत्मा, उसमें लीन हो जाना ब्रह्मचर्य है।

अथवा—

"स्त्रीसंसक्तशयनासनादिवर्जनात् ब्रह्मचर्यम् परिपूर्णमवतिष्ठते ।"

स्त्रियों के पास सोने, उठने बैठने आदि के त्याग से ब्रह्मचर्य परिपूर्ण ठहरता है।

नृपस्य चित्तं कृपणस्य वित्तं मनोरथं दुर्जनमानवानाम् ।
स्त्रियश्चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं,देवो न जानाति कुतो मनुष्यः ॥

राजा के चित्त को, कंजूस के धन को, दुर्जन मनुष्यों के मनोरथों को, पुरुष के भाग्य को, और स्त्री के चरित्र को देव नहीं जान सकते, मनुष्यों की तो बात ही क्या है।

卐

[illegible]

卐

मत्तेभ कुंभदलने भुवि सन्ति शूराः ।
केचित् प्रचण्डमृगराजवधेऽपि दक्षाः ॥
किन्तु ब्रवीमि बलिनां पुरतः प्रसह्य ।
कंदर्पदर्पदलने विरला मनुष्याः ॥

संसार में हाथियों के गण्डस्थल को दलन करने वाले शूरवीर बहुत हैं, कोई कोई सिंहों के मारने में भी चतुर हैं किन्तु बलवानों की ओर इशारा करते हुये कवि कहते हैं कि कामदेव के घमण्ड को दलने वाले विरले ही मनुष्य हैं।

●

शील की महिमा—

किसी नगर में एक सेठ रहते थे। वे धन कमाने के लिये देशान्तर गये। जाते वक्त पति-पत्नी ने शीलव्रत की प्रतिज्ञा ली। कुछ दिन बाद राजा की सवारी निकली और सेठानी को देखकर राजा मोहित हो गया। राजा ने सेठानी को अपने राज प्रासाद में बुलाने के बहुत उपाय किये, पर वह समझ गई और वह नहीं गई। राजा ने सभी प्रयत्न निष्फल हुए जान, साधु का वेष धारण कर भीख मांगने के लिये

इह विध अनेक दुख होंय सुख,
शीलवान नर के निकट ॥

卐

सीताजी का दृष्टांत—
श्रीजानकी रामनरस्य देवी,
दग्धा न संधुक्षितवन्हिना च ।
देवेशपूज्या भवतेस्म शीला—
च्छीलं ततोऽहं परिपालयामि ॥

रामचन्द्र जी की पत्नी सीता जी को शील के कारण अग्नि न जला सकी, शील के प्रभाव से इन्द्र ने पूजा की, इसलिये हमको भी शीलव्रत पालना चाहिये ।

卐

जयकुमार सुलोचना का दृष्टान्त—
विख्यातरूपा हि सुलोचनाख्या,
कान्ता जयाख्यास्य नृपस्य मुख्या ।
देवेशपूजां लभतेस्म शीला—
च्छीलं ततोऽहं परिपालयामि ॥

रूपवती सुलोचना के पति, राजाओं में शिरोमणि जयकुमार इन्द्र के द्वारा शील के कारण पूजे गये, इसलिये हमें भी शीलव्रत पालना चाहिये ।

卐

अष्टादशपुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम् ।
परोपकारः पुण्याय, पापाय परपीड़नम् ॥

व्यास जी के अठारह पुराणों में से दो वचन मुख्य हैं, एक परोपकार पुण्य के लिये और दूसरा परपीड़न पाप के लिये माने गये हैं।

दया धरम को मूल है, पाप मूल अभिमान ।
तुलसी दया न छांड़िये, जब लग घट में प्रान ॥

卐

बैल और गधा—

एक वणिक था, वह बैल लादकर बंजी किया करता था। उसके पड़ोस में एक धोबी रहता था। धोबी का गधा अक्सर रेंका करता था। जब जब वह रेंकता तब तब वैश्य ईश्वर से प्रार्थना करता कि हे ईश्वर! इसका गधा मर जावे। संयोगवश कुछ दिन बाद वैश्य का बैल मर गया, यह देखकर वह बोला—

इतनें काल लों की प्रभुताई ।
तऊ न बैल गधा लखि पाई ॥

卐

दीवान अमरचन्द जी—

जयपुर राज्य में दीवान अमरचन्द जो राजा के मंत्री ~ ~ बड़े ही दयालु एवं धर्मात्मा थे। किसी चुगल-खोर

काला मुंह कर करद का, दिल से दूर निवार।
सब सूरत सुबहान[1] की, मुल्ला मुग्ध न मार॥

(दादू)

माता पासे बेटा मांगे, कर बकरे का सांटा।
अपना पूत खिलावन चाहै, पूत दूजे का काटा॥
दया को दिल में राखिये, तूं क्यों निरदय होय।
साईं के सब जीव हैं, कीरी कुंजर दोय॥

हिन्दू की दया महर तुरकन की दोनों घट से त्यागी।
वे हलाल वे झटका मारें, आग दोनों घर लागी॥
माटी के कर देवी देवता, काटि काटि जीव देइया।
जो तुम्हारा है साँचा देना, खेत चरत क्यों न लेइया॥

(कबीर)

卐

अहिंसा महिमा—

सुकृत की खान इन्द्रपुरी की नसैनी जान,
पाप रज खण्डन को पौन राशि पेखिये।
भव दुख पावक बुझायवे को मेघ–माला,
कमला मिलायवे को दूती ज्यों विशेपिये॥

---

१ धुरी, ईश्वर।

हुए सोचने लगे हे आत्मन् ! तूने यह क्या किया ? कहाँ तू अचौर्य महाव्रत का धारी और कहाँ तूने हार चुराकर यह निंद्य कार्य किया। मालूम होता है आज का भोजन ऐसी ही पाप की कमाई का है। बस तत्काल ही वापिस सेठ के घर आकर सारा वृत्तान्त कहकर एवं पूछकर अन्त में सेठ जी को पंचाणुव्रत दिये।

卐

आचार भ्रष्ट ब्राह्मण -

वेद पढ़े तें कह भयो, कन्ध जनेऊ डार।
जाति क्रिया लक्षण नहीं, ते सब शूद्र संसार॥
मेंढक जम्बुक श्वान खर, ये बोलत धुनि वेद।
पूर्व जन्म के विप्र हैं, पाप किये भये खेद॥
मद्य पायी मेंढ़क भये, परदारा रत श्वान।
वेश्यारत गर्दभ भये, जम्बुक पल तें जान॥
तातें वेद ध्वनि करें, मिटें पीछले पाप।
फिर जो ब्राह्मण हूजिये, कीजे संयम जाप॥

卐

भंगड़ बाबा—

एक भंगड़ बाबा थे। गर्मी के मौसम में सवेरे ही वे किसी गांव को चल पड़े। चलते चलते जब धूप सताने

गोवधाः भूमिहत्याराः कन्याविक्रयकारकाः ।
एते दुष्टाः गताः मार्गे तस्मात् सिचा मयाच्छहाः ॥

इस रास्ते से गाय को मारने वाला पातकी, औ कन्या वेचने वाले-ये दुष्ट निकल गये हैं, इसलिए मैं छीं दे रही हूं ।

卐

एक ब्राह्मण था, उसके लड़का नहीं होता था । एक दिन उसने यह प्रतिज्ञा की 'कि मेरे लड़का हो जावे तो मैं भिण्टा खाऊंगा । संयोग वश कालांतर में उसके लड़का हो गया । अब उसको भिण्टा खाने की बड़ी चिन्ता लगी । यह प्रतिज्ञा पूरी कैसे हो इसका उपाय पूंछने एक पंडित के पास गया । पंडित जी ने बताया कि जिस समय तुम लड़के की शादी करो तो लड़की वाले को १०००) रु० गिन देना और फिर उसके यहां भोजन कर लेना, तुम्हारी प्रतिज्ञा पूरी हो जायगी ।

फूट जाने के कारण पास ही के तालाब में धोबी घाट पर पानी पीने गया। जब सोने का समय आया तो टूटी खाट सोने को मिली। यह सब देखकर वह वापिस लौट आई। जब सवेरा हुआ तो राजा ने पहरेदार से पूछा कि बता, रात को क्या हुआ? उसने उत्तर दिया कि महाराज, जो कुछ हुआ उसका उत्तर मैं राजदरबार में दूंगा। राजदरबार में पहुंचकर उसने राजा से कहा—सरकार! मेरे सब गुनाह माफ हों तो मैं कहूँ। राजा ने वचन दिया। तब लड़को ने उत्तर दिया—

कामी न जाने जात कुजात. भूखा न जानें सीला भात
नींद न जाने टूटी खाट, प्यासा न जानें धोबी घाट

यह सुनकर राजा समझ गया, और शर्मिंदा हुआ फिर बोला-शाबास मैं तुझ पर खुश हूँ, जो तुझे मांगना हो मांग ले। तब उसने कहा-मुझे और कुछ नहीं चाहिये जितने पहरेदार जेलखाने में गये हैं उन सबको छोड़ दिया जाये। यह सुनकर राजा ने उसे खूब इनाम दी एवं सब बन्दी पहरेदार रिहा कर दिये।

卐

साहस

एक राजा था, वह दिग्विजय करके वापिस अपने नगर में प्रवेश करने लगा तो कोट का दरवाजा गिर पड़ा। उसे फिर

हुए तो अब मैं किससे फरयाद करूं ? इसलिए मुझे हंसी आई। यह सुनकर राजा उस लड़के को साथ लेकर उस नगर से जाने लगा। तब नगर देवता ने प्रगट होकर कहा कि राजन्! मुझे आपके व लड़के के साहस को देखकर बड़ी खुशी हुई। यह कहकर नगर देवता ने दोनों की पूजा की। ठीक है—

उद्यम साहस धीरता, पराक्रम बल जाहि।
बुद्धि आदि षट् चिन्ह युत-पूजें देव सु ताहि॥

आपुन टेंट न देखहिं, फुली निहारें आन।

किसी एक भले घर की लड़की थी। कुसंगति में पड़कर किसी जार से वह फंस गई। एक दिन उस जार ने कहा कि गांव के बाहर जो तालाब है आज रात में वहां आकर मिलना। रात के १२ बजे वह जेवर आदि पहनकर वहां जा रही थी कि तालाब के पास उसे चोर मिल गये। चोर उसके सारे जेवर आदि उतार कर उसे तालाब के बीच में एक शिला पर खड़ी कर भाग गये। थोड़ी देर बाद एक सियार जिसके मुंह में मांस का टुकड़ा था पानी पीने वहां आया। अपनी परछाईं देखकर उसने सोचा कि ये कोई दूसरा स्यार है, इसका टुकड़ा छीन लूं। ज्योंही उसने टुकड़ा छीनने को मुंह खोला त्योंही उसके मुंह का टुकड़ा पानी

में गिर गया। वह मुंह-बाये खड़ा रह गया। यह देख कर लड़की ने कहा—

रे रे जम्बुक निर्बुद्धि मीनां च संलग्नतः।
सद्यः मासं परित्यज्य आकाशं किं भक्ष्यति ॥

अरे अरे मूर्ख स्यार! मछलियों से युक्त तालाब में अपने मांस के टुकड़े को छोड़कर आकाश को क्यों खाता है? मुंह वाता है यह सुनकर जम्बुक ने उत्तर दिया—

पश्यत् पश्यत् पर दोषो; स्वं दोषं न पश्यति।
नश्चोरो न च भर्तारो, जले नग्नातु तिष्ठति ॥

तू दूसरों के दोष देखती है; अपने दोष नहीं देखती। जो न चोरों की हुई न यार की, और पानी में नग्न खड़ी है।

卐

नष्ट वुद्धि

एक राजा था, उसे जुआ खेलने का बड़ा शौक था। वह जुआ खेलने का इतना व्यसनी हो गया कि राजपाट का काम देखना भी बन्द कर दिया। मंत्री ने बहुत समझाया, परन्तु उसने एक न मानी। जो भी समझावे, उससे कहे कि जाओ तुम 'नष्ट बुद्धि' हो। रानी ने समझाया, लड़के ने समझाया, परन्तु उनको भी यही जवाब दिया।

अन्त में मन्त्री ने कुछ महिनों की छुट्टी ली और जंगल में जाकर साधु का वेष-धारण कर लिया। जब जटा बढ़ गये, हुलिया बदल गई, तो एक दिन कन्धे पर मछली पकड़ने का जाल डालकर उस नगर में आया। सब लोग दर्शन करने गये, राजा भी गया। साधु का वह वेप देख राजा और साधु में निम्नप्रकार जबाब सवाल हुआ। राजा ने कहा—महाराज, ये स्वांग क्यों बना रक्खा है?

प्रश्नोत्तर

स्वामी ये स्वांग नांय, सफरी ग्रहण जाल,
खेलत शिकार कभी मांस चाह भये तें।
मांस हू भावत कभी दारू की ख्वारी मांही,
सुरापान कियो कभी वेश्या घर गये तें॥
बेश्या हू गमन जोय परनारी मिले नांहि,
परनारी सेव कभी चोरी घन मिले तें।
चोरी हू करत कभी जुआ मांहि हार होत,
एते सब काम करत 'नष्ट बुद्धि' भये तें॥

यह सुनकर राजा को विवेक आया और उसने जुआ खेलना छोड़ दिया।

卐

भाव

एक वेश्या थी, उसने जिन्दगी भर पाप किया अन्त में वह मरी जब उसकी लाश स्मशान में पहुँची। उसे देखकर कामी सोचता है कि यदि यह कुछ दिन और जीवित रहती तो इससे विषय भोग करते। वहीं एक कुत्ता था, उसने सोचा कि ये लोग इसकी लाश को यहीं छोड़कर चले जावें तो इसके मांस से अपनी क्षुधा तृप्त करूँ। वहीं पर एक साधु बैठे ध्यान कर रहे थे, उन्होंने विचार किया कि धिक्कार इसके जीवन को, जो इतना अमूल्य मनुष्य-भव पाकर व्यर्थ ही खो दिया, कुछ आत्म-कल्याण न कर पाप कर्म किये। इस प्रकार तीनों के अलग अलग भाव (परिणाम) हुये। और उन्हें निम्नप्रकार फल मिला—

विसनी नर नरकहुं गयो, लह्यो क्षुधा दुख श्वान।
साधु सुरग पहुंचे सही, भावन को फल जान॥

卐

जन्म की निरर्थकता

एक सेठ था, उसने धन पाकर कभी दान नहीं दिया, न तीर्थों की वन्दना की, कभी शास्त्र नहीं सुना, कोई अच्छा काम नहीं किया। जब वह मरा और लोग उसे चिता में अचानक जोर का तूफान आ जाने के कारण उसे अधजला

छोड़कर चले आये। थोड़ी देर बाद एक सियार ने उसकी लाश चिता में से बाहर खींच ली और खाने लगा। वहीं एक साधु बैठे थे। उसे खाते देखकर वे बोले—

हस्तौ दानविवर्जितौ, श्रुतिपुटौ सारस्वतद्रोहिणौ।
नेत्रे साधुविलोकनेन रहितौ पादौ न तीर्थं गतौ॥
अन्यायोपार्जितवित्तपूर्णमुदरं गर्वेण तुंगं शिरो।
रे रे जम्बुक मुंच मुंच सहसा नीचं सुनिंद्यं वपुः॥

अरे स्यार ! इसके निंद्य शरीर को मत खा, शीघ्र ही छोड़, क्योंकि इसने हाथों से दान नहीं दिया, कानों से शास्त्र नहीं सुने, आँखों से साधुओं को नहीं देखा, पैरों से तीर्थ वन्दना नहीं की, इसका पेट अन्याय के धन से भरा है, इसका शिर अहंकार से ऊंचा उठा रहा।

卐

पुण्य का प्रभाव

सात आदमी सावन के महिने में एक गाँव से दूसरे गाँव को जा रहे थे। रास्ते में बड़े जोर का पानी बरसने लगा, तब वे एक वृक्ष की ओट में खड़े हो गये, पानी मूसलाधार बरसने लगा और बिजली उनके ऊपर तड़कने लगी। ऐसा मालूम होता था कि आज हम सब पर बिजली गिरने वाली है, न जाने हममें को [illegible] दान यह तय हुआ कि हममें से बारी बारी [illegible] सामने वाले पेड़

गुणवान नर एक से सबकी रक्षा होय ।
उसके गुण प्रभाव से घर में मंगल होय॥

15

होनहार बिरवान के होत चीकने पात ।

एक राजा के यहाँ लड़का पैदा हुआ । काला रंग शरीर होने के कारण रानी ने उसे उसी समय में पैदा एक तेली के लड़के से बदल लिया । राजा ने इसे पढ़ की बहुत कोशिश की परन्तु उसे विद्या न आई । इधर तेली के यहां का लड़का बहुत जल्दी ही विद्वान् बन गया । ये लड़के बड़े हो गये, एक दिन राजा के दरबार में ए वनजारा जिसके पांच असली रतन जिन्हें उसी गांव के ए सेठ ने धरोहर रखे थे वापिस मांगने पर नकली दे दि जब उसने असल रतन मांगे, तो सेठ ने कहा - तेरे ये है रतन हैं, इन्हें ले जा । आखिर में असली रतन न मिलने पर वनजारा राज दरबार में अपनी फरयाद लेकर पहुँचा ।

राजा, मन्त्री, राजा के लड़के किसी को उसके इन्साफ की युक्ति नहीं आई तब राजा ने घोषणा कराई कि जो इस बनजारे का इन्साफ करेगा उसे दस हजार रुपयों का इनाम दिया जावेगा। अन्त में तेली का लड़का राजदरबार में गया, उसने एक पेटी में एक लड़का बैठा दिया और उसे सेठ के शिर पर रखवा कर जेठ मास की दोपहरी में नंगे पाँव चलकर नगर कोट का चक्कर लगाने का उसको हुक्म दिलवाया। जब सेठ उस पेटी को लेकर चला तो थोड़ी दूर चलने के बाद कहने लगा कि 'व्यर्थ ही उस बेचारे के रतन बदले, यदि रतन न बदले होते तो ये मौका काहे को आता।' यह बात पेटी में बैठे लड़के ने सुन ली। बाद में लड़के से असलियत मालूम कर उस बनजारे को असली रतन दिलवाकर सेठ को दण्ड दिया। दूसरे दिन राजा ने तेली को बुलाकर लड़के के सम्बन्ध में खोजबीन कराई, तो वह राजा का लड़का निकला। अन्त में राजा ने उसे युवराज पद दे दिया।

होनहार छिपते नहीं, लाख करो किन कोय।
रुई लपेटी आग ज्यों, निहचै परगट होय॥

卐

जाति स्वभाव

एक दिन एक शेरनी प्रसूता हुई, उसको भूख लगी तो शेर एक गीदड़ का छोटा सा बच्चा जिन्दा पकड़कर

ाया और बोला, आज तो इसे खाले, कल देखा जावेगा। उस छोटे से बच्चे पर शेरनी को दया आ गई। उसने इसे नहीं खाया। वह शेर के बच्चों के साथ रहने लगा। जब वे कुछ बड़े हो गये, एक दिन वहां से एक हाथी निकला। शेर के बच्चे तो झट लपक कर हाथी के ऊपर चढ़ गये, परन्तु गीदड़ के बच्चे को हाथी का डर लगा और वह मांद में जाकर छिप गया। जब हाथी चला गया तब गीदड़ के बच्चे ने शेरनी से पूंछा कि मां! आज हाथी को देखकर मुझे क्यों डर लगा? यह सुनकर शेरनी बोली—

शूरोऽसि कृतविद्योऽसि, दर्शनीयोऽसि पुत्रकः।
यस्मिन् कुले त्वमुत्पन्नो गजस्तत्र न हन्यते॥

हे पुत्र! तुम शूरवीर हो, बुद्धिमान हो और दर्शनीय हो, पर जिस कुल में तुम्हारा जन्म हुआ है। उसमें हाथी नहीं मारे जाते। 卐

सिंह किसका जजमान

एक गरीब ब्राह्मण था, एक दिन उसकी स्त्री ने कहा कि परदेश जाओ वहां कुछ आजीविका चल निकले तो अच्छा है। वह चला, चलते चलते जंगल के ही बीच रात हो गई। उसने एक पेड़ के नीचे रात बिताने का निश्चय किया। उस पेड़ पर एक हंस रहता था। बगल में एक गुफा थी, उसमें एक शेर रहता था। हंस ने ब्राह्मण से कहा कि यहां मत रहो। ब्राह्मण बोला, अब रात हो गई है, कहां

जाऊँ ? यह सुनकर हंस को दया आ गई और उसने उसे पास के पेड़ के ऊपर ठहरा लिया। जब थोड़ी देर बाद वहाँ सिंह आया तो हंस बोला, मित्र ! तुम निगुरे हो, यह सबसे बड़ा दोष तुम्हारे में है, सौभाग्यवश आज ये ब्राह्मण देवता तुम्हारे पास आये हैं, इन्हें अपना गुरु बनाओ। यह सुन-कर शेर ने ब्राह्मण की पूजा की और गजमोतियों की दक्षिणा दी और हंस के कहने पर उसे अपनी पीठ पर बैठा कर उसके घर पहुंचा आया। कालान्तर में जब वे मोती बिक चुके और फिर खाने को कुछ नहीं रहा तो ब्राह्मण फिर से सिंह के पास पहुँचा। अब वहाँ हंस नहीं था, उसकी जगह एक कौआ था। जो शेर को उसके शिकार का इशारा किया करता था। ब्राह्मण के आते ही कौआ ने इशारा किया, सिंह ने आकर देखा तो गुरु खड़े मिले। उन्हें देखकर सिंह बोला—

वे तो हंसा उड़ गये, काक भये परधान।
ब्राह्मण अपने जाहु घर, सिंह किसका जजमान॥

卐

बात का जख्म

किसी जंगल में एक भील रहता था, एक दिन एक शेर लँगड़ाता हुआ उसके पास आया और भील से बोला, भाई ! मेरे पैर में काँटा लग जाने से वह गल गया है, तुम काँटा निकालकर दवा बाँध दो। भील ने काँटा निकाल

कर दवा बांध दी । कुछ दिन में उसका पैर अच्छा हो गया और दोनों मित्र हो गये । एक दिन भील और शेर किलोल कर रहे थे, भील कहने लगा --क्या कुत्ता सरीखा लड़ता है शेर ने उपकारी मानकर कुछ ध्यान नहीं दिया । फिर खेलने लगा । खेल खेल में उसने तीन बार वही बात कही जो शेर के हृदय में चुभ गई । एक दिन शेर बोला—मेरे शिर में दर्द है, शिर में कुल्हाड़ी से घाव कर यह दवा भर दो भील ने वैसा ही किया । दो तीन रोज में घाव भर गया एक दिन शेर फिर बोला-मेरी छाती में दर्द है । भील ने कहा,--इसकी क्या दवा है ? शेर नें कहा-इसकी कोई दवा नहीं है । यह कहकर उसने छाती के तीन छेद बताये और बोला-बस आज से हमारी तुमारी मित्रता छूटी । किसी कवि ने कहा—

बात का जख्म है, तलवार से बढ़कर ।
कीजिये कत्ल, पर मुंह से कोई इरशाद न हो ॥

卐

दृढ़ प्रतिज्ञ—

किसी जंगल में एक मुनिराज विराजमान थे बड़े बड़े [illegible] उनके दर्शन कर व्रतों को ग्रहण करते थे, वहां पर एक भील रहता था जिसका नाम खदिर था. [illegible] मुझे भी कोई व्रत दीजिये, मुनि बोले [illegible] उसने कहा महाराज मैं

मांस खाकर ही जीता हूं ? उसे कैसे छोड़ सकता हूं, तब मुनिराज ने कहा-तो अच्छा काक मांस का त्याग करदे, उसने नमस्कार करके वह व्रत अंगीकार किया, कुछ दिन के बाद वह बीमार पड़ा. अनेक औषधोपचार करने पर भी कोई लाभ नहीं हुआ, अन्त में एक हकीम ने कौआ का मांस खाने को बताया, भील ने कहा मेरे कौआ को मांस न खाने का व्रत है, मैं कौआ का मांस हरगिज नहीं खाऊंगा। चाहे मर भले ही जाऊं। उसकी स्त्री ने सोचा कि ये हठ कर रहे हैं तो उन्हें समझाने के लिये अपने भाइयों को बुलाने एक आदमी भेजा, जब वे लोग आ रहे थे तो रास्ते में एक स्त्री रोती हुई उन्हें मिली, उसे रोते देख उन लोगों ने पूछा कि तू क्यों रो रही है ? वह बोली मैं देवी हूं और वह भील मरकर मेरा पति होने वाला है, अब तुम लोग जा रहे हो और वे अपने व्रत विचलित हो गये तो मेरे पति नहीं हो पावेंगे। सालों ने आकर उसे बहुत समझाया पर उसने अपना व्रत खण्डित नहीं किया और मरकर स्वर्ग में देव हुआ। किसी कवि ने कहा –

अपने प्रण से वीर न हटते चाहे उन्हें डालिये पीस,
नेम निबाहेंगे वे अपना जब तक उनके धड़ पर सीस।
खाकर जिसे उगल देते हैं, फिर उसको खाते हैं श्वान,
देते छोड़ उसे ले फिर से, छूते कभी नहीं मतिमान ॥

卐

संगति का फल—

एक दरिद्री ब्राह्मण था, जब खाने से तंग आ गया तो एक दिन उसकी स्त्री ने कहा कि कहीं चले क्यों नहीं जाते, बाहर जाओ और कुछ कमा के लाओ। वह चला, चलते चलते रास्ते में एक मुनिराज को देखकर उसने सोचा कि ये तो मुझसे ज्यादा दरिद्री दिखते हैं जो कि इनके पास पहनने को लंगोटी तक नहीं है हो न हो इनके साथ चलना चाहिये। यह सोच वह उन मुनि के साथ हो गया, लोगों ने सोचा कि महाराज के साथ ये कोई ब्रह्मचारी होगा। उसके न्योते होने लगे, अच्छा खाने पीने को मिलने लगा, ब्राह्मण ने सोचा कि इनके साथ रहने मात्र से अच्छे भोजन मिलने लगे, यदि इन सरीखे व्रत धारण कर लूं तो और भी अधिक लाभ होगा। इनकी संगति से मैं अपनी भलाई कर लूंगा यह बात उसकी समझ में अच्छी तरह आ गई।

संगति ही गुण ऊपजे, संगति ही गुण जाय।
वांस फांस अरु मीसरी, एकहि भाव विकाय॥

उसने पहले श्रावक के व्रत धारण किये, फिर मुनि हो गया। एक दिन वह सामायिक कर रहा था कि अचानक सांप ने काट खाया तब इसके गुरु ने समाधिमरण-पूर्वक मरण करवाया जिसके प्रभाव से वह स्वर्ग में देव हुआ, देव ने अवधिज्ञान से अपना पूर्व वृत्तान्त जानकर मनुष्य क में अपने गुरु की पूजा की।

कर गये सो ले गये, घर गये सो खो गये—

किसी देश में राजा ५ वर्ष के लिये बनाया जाता था बाद में उसे जंगल में भेज दिया जाता था, इस तरह बहुत से राजा बनते रहे। आखिर में एक दूरदर्शी पुरुष राजा बना। उसने पांच वर्षों में उस जंगल में सुन्दर नगर बसा दिया। अनेक अच्छे अच्छे महल बनाये, किला बनाया, आमदनी के अनेक साधन बनाये, और खजाने का कुल रुपया वहां पहुँचा दिया। जब ५ वर्ष पूरे हो गये तो वहां का राजा बन गया। कहने का मतलब यह है यदि हम आगे के लिये कुछ करेंगे तो उसका फल भी पा सकेंगे।

卐

अपि शास्त्रेषु कुशलाः लोकाचारविवर्जिताः –

चार विद्वान बनारस से पढ़कर अपने घर जा रहे थे, चलते-चलते रास्ते में दो मार्ग मिले, उन्हें देखकर वे सोचने लगे कि अब किस मार्ग से चलना चाहिये, उनमें से एक बोला कि शास्त्रकारों ने नीति बनाई है कि—"महाजनो येन गतः सः पन्थः" इसका अर्थ उन्होंने यह लगाया कि जिस मार्ग पर अधिक मनुष्य जाते हों उस पर चलना चाहिये। संयोगवश एक मुर्दे को लिये बहुत से आदमी श्मशान के मार्ग पर जाते हुए उन्होंने देखे और वे चारों उनके पीछे चले, वहां पहुँचने पर उन्हें एक गधा दिखाई दिया, उसे देख-

परीक्षा—

एक सेठ का लड़का था, उसे निकट भव्य जान मुनिराज ने खूब पढ़ाया। पढ़ लिखकर जब घर आया तो घर में ऐसा फंस गया कि कुछ दिनों तक वह अपने गुरु के पास नहीं गया। एक दिन जब वह गुरु के पास गया तो गुरु ने पूछा कि तुम बहुत दिनों से क्यों नहीं आये? उसने उत्तर दिया कि गुरु जी गृहस्थी में से निकलना मुश्किल हो गया है। मुनिराज ने कहा कि सब लोग तुमसे झूठा प्रेम करते हैं, इसकी परीक्षा के लिये उनने कहा कि तू आज घर जाकर सांस फुलाकर गिर पड़ना। उसने वैसा ही किया। वैद्य बुलाये गए, उनकी समझ में कुछ नहीं आया, थोड़ी देर बाद मुनिराज वहीं पहुंचे और दूध मंगाकर कुछ मंत्रसा पढ़कर बोले जो इस दूध को पियेगा वह मर जायगा और यह लड़का अच्छा हो जावेगा। माता पिता ने दूध पीने से इन्कार कर दिया वे बोले हम जिन्दा रहेंगे तो और लड़के हो जावेंगे। जिस-जिस को दूध पीने को कहा गया उन सबने दूध पीने से इन्कार कर दिया। आखिर में उसकी स्त्री से भी कहा गया, वह बाली मेरे पीहर वाले बड़े धनवान हैं मैं तो वहीं चली जाऊंगी। इस प्रकार जब सबकी परीक्षा हो चुकी तब गुरु जी बोले, बेटा! उठो और आंखें खोलो। वह उठा और संसार से विरक्त हो मुनि हो गया।

卐

स्त्री-वैराग्य का कारण—

कुलभूषण देशभूषण दोनों राजकुमार १२ बरस तक विद्या पढ़कर अपने नगर को आ रहे थे। कल गद्दी होने वाली है। जब वे नगर के बाह्योद्यान में आये तो महल की छत के ऊपर उनकी बहिन इन दोनों की आरती उतारने अपने बाल सुखा रही थी, उसे देखकर दोनों मोहित हो गए। अन्त में बातचीत बढ़ते-बढ़ते लड़ने को तैयार हो गये, तब मन्त्री ने समझाया कि तुम लोग व्यर्थ की बात पर लड़ रहे हो, जिस चीज पर तुम्हारी लड़ाई हो रही है वह तो तुम्हारी बहिन है। बस, यह सुनते ही दोनों बड़े लज्जित हुए और उसी समय गुरु के पास जाकर मुनि हो गए।

卐

[illegible] —

[illegible] नगर में एक मोची रहता था, उसके एक गधा था, वह अत्यन्त [illegible] करता था इसलिये उसका नाम गंधर्वसेन रख [illegible] एक दिन वह मर गया तो मोची ने बाल [illegible] लगा, [illegible] देख लोगों ने रोने का [illegible] गंधर्वसेन मर गये हैं, लोगों ने सोचा [illegible] कुछ [illegible] राजा तक [illegible] बाजार बन्द [illegible] यह बात पहुंची, राजा

ने इसका भेद जानना चाहा, तो पूछते पूछते अन्त में धोबी से पूछा कि क्या गन्धर्वसेन कौन थे? वह रोकर बोला, सरकार मेरा गधा था।

कैसा देखो साधे जोग, छीजे काया बाढे रोग।

卐

आत्म-गौरव—

दो राहगीर किसी जंगल से गुजरते हुए पास वाले गाँव को जा रहे थे। उनमें से एक बोला, चलो भाई 'सन्ध्या' आ रही है। यह बात पास की झाड़ी में बैठे एक शेर ने सुनी, उसने सोचा कि सन्ध्या क्या बला है? थोड़ी देर बाद एक धोबी गधे को ढूंढता हुआ वहाँ आया और झाड़ी की बगल में शेर को खड़ा देख अन्धेरा हो जाने के कारण उसने सोचा कि यही गधा खड़ा है, पीछे से लाठी मारी और कान पकड़ कर घसीटने लगा। शेर ने सोचा कि यह कोई सन्ध्या आ गई है कि जो मुझे पकड़े ले जा रही है, वह चला गया। धोबी ने घर ले जा कर उसे एक खूंटे से बांध दिया। रात भर वह बंधा रहा, बड़े सवेरे ४ बजे और गदहों के समान इस पर कपड़े लादे और तालाब की ओर चल दिया, रास्ते में शेरों की दहाड़ सुनते ही इसने दहाड़ मारी जिसे सुन सब गधे और धोबी भाग खड़े हुए, यह भी अपने भाइयों से जा मिला। ठीक इसी प्रकार हमको भी मिथ्यात्व रूपी सन्ध्या ने पकड़ लिया है जिससे हम अपने आत्म-गौरव को भूल गए हैं।

अन्तिम भावना—

एक अच्छे ऊँचे दर्जे के महात्मा थे, उन्होंने समाधि लेली और अपने चेलों से कहा कि देखो जिस समय मैं स्वर्गारोहण करूँगा उस समय आकाश में बाजे गर्जेंगे। कुछ दिन बाद उनके प्राण-पखेरू उड़ गये, परन्तु आकाश में बाजे नहीं बजे, इससे उनके चेलों को बड़ा संशय हुआ। एक दिन यहाँ कोई दूसरे महात्मा आये। चेलों ने उनसे पूछा, महाराज! गुरु जी ने समाधि ली थी तब उन्होंने कहा था कि जिस दिन मैं स्वर्गारोहण करूँगा उस दिन आकाश में बाजे बजेंगे, परन्तु न जाने क्या बात हुई आज तक बाजे न बजे। यह सुन उस महात्मा ने कहा कि तुम्हारे गुरु के मन में अन्त समय जो यह बेर का पेड़ खड़ा है इसके फल खाने की इच्छा हुई और वे मरकर इसके एक बेर में कीड़ा हुए हैं। यह कहकर झट एक बेर तोड़ा और कहा कि इसमें तुम्हारे गुरु जी का जीव अटका है ज्योंही फाड़ा तो वह कीड़ा मरा और मरते ही आकाश में बाजे बजने लगे।

卐

गई सु गई अब राख रही को—

किसी नदी के किनारे एक किसान रहता था। उस किसान को एक रत्नों की पिटारी खेत जोतते समय जमीन में गड़ी मिली। उसने समझा कि ये अच्छी बटैयाँ हैं, खेत में एक तरफ रख दीं और कौओं को उड़ाने के लिए फेंकना शुरू

वर्तमान वर्ते सदा सो सुखिया जग माँहि—

एक करोड़पति सेठ थे, उन्होंने सभी काम अपने लड़कों को सौंप दिये थे वे सिर्फ गद्दी पर बैठे रहते थे, लोग उनसे आकर कहते, कि सेठ जी आपके पास इतना धन है कि वह सात पीढ़ी तक चलता रहेगा आदि। लोगों की ये बात सुनकर सेठजी को चिन्ता हुई कि आठवीं पीढ़ी का क्या होगा? बस इसी चिन्ता में सेठजी बीमार हो गए, उन्हें कमजोर होता देख कर सेठानी ने एक दिन पूछा कि आपको क्या हो गया है कौनसी चिन्ता आपको लग गई है, तब सेठजी ने अपनी चिन्ता प्रगट कर दी, उसे जानकर सेठानी जी ने कहा कि मेरे कल एकादशी का व्रत है और आप कल ८ बजे पंडितजी को स्वयं सीधा देने जावें। दूसरे दिन जैसे ही सेठजी सीधा लेकर पहुँचे और पं० जी को सीधा देने लगे, उन्हें सीधा देते देखकर पं० जी बोले सेठजी आज का सीधा तो मेरे पास आ चुके हैं इस लिए मैं इसे नहीं लूंगा यह सुनकर सेठजी बोले कल काम आ जावेगा। पं० जी ने उत्तर दिया—नहीं सेठजी "आज का आज और कल का कल" मैं कल की चिन्ता नहीं करता हूं।

यह सुनकर सेठजी मनमें सोचने लगे कि देखो ये दरिद्री ब्रामण कल की चिन्ता नहीं करता है मुझे धिक्कार जो मैं आठवीं पीढ़ी की चिन्ता करता हूँ यह सोचकर उसे अपनी वर्तमान की दशा पर सन्तोष हो गया और उसकी चिंता मिट गई।

स्वभाव—सन्मुख—

अध्याय तीसरा

कवितावलि

(१) ध्येय

जीवन-चरित महापुरुषों के हमें नसीहत देते हैं।
हम भी अपना अपना जीवन स्वच्छ साफ कर सकते हैं॥
हमें चाहिये हम भी अपने बना जांय पदचिन्ह ललाम।
इस जमीन की रेती पर जो कभी किसी के आवें काम॥

(२) इन्द्रिय विषय

कान निरन्तर गान तान सुनवो ही चाहत,
चित ही चाहत चैन रैन दिन रहत सराहत।
नासा इतर सुगन्ध चहत फूलन की माला,
त्वचा चहत सुख सेज संग कोमल तनु वाला।
रसना हू चाहत नित खट्टे मीठे चरपरे,
इन पांचों के परपंच ने भूपन को भिक्षुक करे॥

(३) संसार की दशा

तू क्या उम्र की शाख पर सो रहा है,
तुझे कुछ खबर है कि क्या हो रहा है।

कतरते हैं जिसको चूहे रात दिन दो,
तू उस पर पड़ा बेखबर सो रहा है॥
खड़ा नीचे है मौत का मस्त हाथी,
तेरे गिरने का मुन्तजिर हो रहा है।
अय "न्यामत" ये टहनी गिरा चाहती है,
विषय बूंद पर क्यों तू जां खो रहा है॥

(४) धन और धर्म का सम्बन्ध

सोचत है रैन दिन काहू विध होय धन,
सो तो धन धर्म बिना कनहू न पायो है।
यह तो प्रसिद्ध बात जानत जहान सब,
धर्म सेती धन होय पाप तें बिलायो है॥
धर्म के किये तें नित पुण्य का प्रकाश होत,
पाप का विनाश होय, मोक्ष हू बतायो है।
यातें मन वचन काय धर्म में लगन लाय,
ये ही उपाय वीतराग जी बतायो है॥

(५) संगति का प्रभाव

तपें तवा पर आय स्वांति जल बूंद बिनट्ठो,
कमल पत्र पर आय वही मोती सम दिट्ठो।

(११) नमस्कार

जल जो चढ़ाऊं मच्छ कच्छ तैं विगार होत,
दूध जो चढ़ाऊं तंह वच्छा की जुठार है।
फूल जो चढ़ाऊं तो भौंरा ही सुगन्ध लेत,
पत्र जो चढ़ाऊं तंह पेड़ को उजार है।
मेवा मिष्ठान्न तंह माखी मुख डार देत,
धूप जो चढाऊं तंह अग्नि को अहार है।
एते एक एक हैं अनेक दोप युक्त हैं,
तातें प्रभू मोरी एक सूखी नमस्कार है॥

(१२) इन्द्रिय दमन

मौन के धरैया गृह त्याग के करैया,
विधि रीत के सधैया पर निंदा से अपूठे हैं।
विद्या के अभ्यासी गिरकंदर के वासी,
शुचि अंग के आचारी हितकारी बैन छूटे हैं॥
आगम के पाठी मन लाय महा काठी,
भारी कष्ट के सहन हारे राम सों हू रूठे हैं॥
इत्यादिक जीव सब कारज करत रीते,
इन्द्रियन के जीते विन कारज सब झूठे हैं॥

(१३) वृद्ध विवाह

व्याह को चाह उठे मन मांहि तो पन्द्रह बीस पचीस लौं कीजे,
तीस बरस पेंतीस भये चालीस पचास पै नाम न लीजे।
काम को दाह उठे मन मांहि, तो ज्ञान सुधारस पान करीजे,
साठ बरस पै जी ललचावे, तो जूता उतार कपार में दीजे॥

(१४) चुगलखोर

चूकि जात जौहरी जवाहर परख जावे,
चूकि जात पण्डित पढ़ैया वेद चारी के।
चूकि जात घोड़े को चढ़ैया असवार पूरो,
चूकि जात बाजे रोजगार रोजगारी के॥
चूकि जात मेघ मेघराजन की बात हू में,
चूकि जात लेखो या लिखैया लेख भारी के।
वाच किरपान को चलैया पूरो चूकि जात,
एक नहिं चूके चुगल काम ख्वारी के॥

(१५) पानी

पानी बिन मोती कोई जौहरी खरीदे नांहि,
पानी बिन सुन्दर सरोही नहीं काम की।
पानी बिन घोड़ा की सवार नहिं चाह करे,
पानी बिन हीरा हू को कीमत छदाम की॥

पानी बिन 'सुन्दर' सरोवर न नीको लागें,
पानी बिन शान हू सुहात नहिं वाम की।
अरे निरज्ञानी तू जतन कर पानी राख,
पानी चलो जैहे जिन्दगानी कौन काम की॥

१६-बुढ़ापे में टेढ़ी कमर क्यों ?

जाको इन्द्र चाहै अहमिन्द्र से उमाहे जासों,
जीव मुक्ति जाय भव मल को वहावे हैं।
ऐसो नर जन्म पाय खोयो विषय-विष खाय,
जैसे कांच सांटे मूढ़ मानिक गमावे है।
माया नदी वूढ़ भींजा काय बल तेज छीजा,
आया पन तीजा अब कहा वश आवे हैं॥
तातें निज शीश डोले नीचे नैन किये डोले।
कहा बढ़ बोले वृद्ध वदन दुरावे है॥

१७-खुशामदी

महाजन मंत्रियों से बोले बैंगन बहुत बुरा है।
मंत्री बोले तभी तो इसका बे-गुन नाम धरा है॥
कुछ देर बाद राजा बोले बैंगन अति अच्छा है।
कहा तभी तो इसके शिर पर हरा मुकुट रक्खा है॥
पलट दी बात खुशामदी लोगों ने।
देश को किया बरबाद खुशामदी लोगों ने॥

१८-मृत्यु के चार दृश्य

पेट में पौंढ़ के पौंढ़ मही
जननी संग पौंढ़ के बाल कहाये,
पौंढ़न लागे तिया संग में
अब सारी युवा तुम पौंढ़ गमाये।
सिद्ध-शिला के जो पौंढ़नहार,
तिन्है कर ध्यान कबहुं नहीं लाये।
पौंढ़त पौंढ़त ऐसे भये कि,
चिता पर पौंढ़न के दिन आये ॥१॥

卐

मात पिता युवती सुत बान्धव,
लागत है सबको अति प्यारो।
लोग कुटुम्ब खरो हित मानत,
होय नहीं हमसों कभी न्यारो।
नेह सनेह तहां तक जानहु,
बोलत है मुख शब्द उचारो।
'सुन्दर' चेतन शक्ति गई,
तब वेगि कहै घर मांझ निकारो ॥२॥

卐

राग कीनो रंग कीनो तरुणी प्रसंग कीनो,
अंग कीनो चोकनो सुगन्ध छाय चोली में।
नेह कीनो गेंह कीनो सुखद सनेह कीनो,
वासर विताय दीनो नाहक ठिठोली में॥
कहें कवि 'वेनी' प्रभू भजन न कीनो मूढ,
खेल सौ दिखाय चलो दिना चार टोली में।
डोलत न बोलत न खोलत पलक हाय,
लाठ से घरे हैं आज काठ की खटोली में॥३॥

卐

गर्भ चढे पुनि रूप चढे
पलना पें चढे, चढे गोद घना के,
हाथी चढे पुनि घोड़ा चढे
सुखपाल चढ़े, चढ़े जोम घना के।
शत्रु व मित्र के चित्त चढ़े
कवि ब्रह्म भवें दिन बीते पता के॥
वीर जिनेश को ध्यायो नहीं
सो चढ़े चल कांधे पै चार जना के॥४॥

२३-लौकिक सात सुख

पहला सुक्ख निरोगी काया, दूजा सुख घर में हो माया ।
तीजा सुक्ख सुलक्षण नारी, चौथा सुख सुत आज्ञाकारी ॥
पंचम सुक्ख पंच सब मानै, छट्ठा सुख विद्या पहिचानै ।
सप्तम सुक्ख भक्ति जो होई, जग में पूरन सुखिया सोई ॥

२४-नर पर्याय निरर्थक खोना

ज्यों मतिहीन विवेक विना नर, साजि मतंगज ईंधन ढोवे,
कांचन भाजन धूल भरै शठ, मूढ़ सुधारस सों पग धोवे ।
वाहित काग उड़ावन कारन, डार महामणि मूरख रोवे,
त्यों यह दुर्लभ देह 'बनारसि', पाय अजान अकारथ खोवे ॥

२५-स्मृति

इस भव रंग भूमि पर कोई रहा न रहने पावेगा ।
निज निज अभिनय पूरा करके लौट समय पर जावेगा ॥
यह भौतिक शरीर क्षणभंगुर मिट्टी में मिल जावेगा ।
केवल शुभ या अशुभ कर्म ही उसकी याद दिलावेगा ॥

इनसे बचना चाहिए—जंगल के भील से, आसमान की
ल से, किवार की खोल से और कचहरी के वकील से।

—अज्ञात।

हमेशा दो जेबें रखो—एक तो बहुत बड़ा अपमान,
नादर आदि सहने के लिए, और दूसरा छोटा रुपया रखने
लिए। —सफलता के उपाय।

पक्षपात, तरफदारी, आदमी की आँखों को वास्तविकता
की ओर से अन्धा बना देती है। —जेम्स एलन।

खुशामद करने वालों से सदा बचो, वह बड़ा भारी चोर
होता है, वह तुम्हें मूर्ख बनाकर तुम्हारा समय चुराता है और
बुद्धि भी। —सफलता के उपाय।

संसार की अन्य चीजों की कीमत है, क्योंकि उन्हें संसारी
बना सकते हैं, पर जीवों को कोई नहीं बना सकता अतः वे
अमूल्य हैं। जब उनका कोई मूल्य नहीं चुका सकता तो उनके
मारने का अधिकार ही उनको क्यों है? —अज्ञात।

योग्य मनुष्य को काम के लिए दूर नहीं जाना पड़ता।

—सफलता के उपाय।

ब्रह्मचर्य ही जीवन है। ब्रह्मचर्य से स्मृति स्थिर और
संग्राहक बनती है, बुद्धि तेजस्विनी और सफलवती बनती है।

—अज्ञात।

गधा बेशक बेहूदा जानवर है, मगर हमारा बोझ ढोता
है, इसलिए हमें वह प्यारा है। मतलब यह कि सबको काम
प्यारा है। अमूल्य सहस्र हीरे।

परस्पर की शोभा

कमलेन पयः पयसा कमलं,
पयसा कमलेन विभाति सरः।
मणिना वलयं वलयेन मणिः,
मणिना वलयेन विभाति करः॥
निशया च शशिः शशिना च निशा,
निशया शशिना च विभाति नभः।
कविना च विभु विभुना च कविः,
कविना विभुना च विभाति सभा॥

नोट--बरात आदि के अवसर पर जब इसे काम में लेवें तो चौथे चरण में निम्न परिवर्तन कर सकते हैं:—

भवता च सभा सभया च भवान्,
भवता सभया च विभाति जनः।

अर्थ—कमल से जल की जल से कमल की, जल और कमल से तालाब की शोभा होती है, मणि से कंकण (चूड़ी) की कंकण से मणि की, मणि और कंकण से हाथ की शोभा होती है, रात्रि से चन्द्रमा की चन्द्रमा से रात्रि की, रात्रि और चन्द्रमा से आकाश की शोभा होती है, कवि से राजा की राजा से कवि की, राजा और कवि से सभा की शोभा होती है।

संस्कृत-श्लोक-संग्रह

पुरुष का लक्षण

पात्रे त्यागी गुणे रागी भोगी परजनैन सह ।
शास्त्रे बोधः रणे योधः पुरुषस्य पंच लक्षणम् ॥

अर्थ—१-पात्रों (१ उत्तम-मुनि, २ मध्यम-श्रावक, ३ जघन्य-सम्यक्त्वी) को दान देना। २-गुणीजनों से राग रखना। ३-अन्य कुटुम्बी पड़ोसी आदि के साथ सुख भोगना। ४-शास्त्रों का ज्ञाता होना। ५-युद्ध में चतुर होना। ये पुरुष के पांच लक्षण हैं।

सार्थकता

बुद्धेः फलं तत्त्वविचारणं च, देहस्य सारं व्रतधारणं च ।
अर्थस्य सारं किल पात्रदानं, वचः फलं प्रीतिकरो नराणाम् ॥

अर्थ- मनुष्यों को बुद्धि का पाना तभी सफल है जब तत्त्वों का चिन्तवन किया जाय। शरीर का पाना तभी सार्थक है, जब उससे व्रत धारण किए जायें। धन का पाना तभी सफल है जब पात्रों को दान दिया जाय। वचन का पाना तभी सफल है जब प्रेम के वचन (मिष्ट वचन) बोले जायें।

परस्पर की शोभा

कमलेन पयः पयसा कमलं,
पयसा कमलेन विभाति सरः ।
मणिना वलयं वलयेन मणिः,
मणिना वलयेन विभाति करः ॥
निशया च शशिः शशिना च निशा,
निशया शशिना च विभाति नभः ।
कविना च विभु विभुना च कविः,
कविना विभुना च विभाति सभा ॥

नोट--बरात आदि के अवसर पर जब इसे काम में लेवें तो चौथे चरण में निम्न परिवर्तन कर सकते हैं :—

भवता च सभा सभया च भवान्,
भवता सभया च विभाति जनः ।

अर्थ—कमल से जल की जल से कमल की, जल और कमल से तालाब की शोभा होती है, मणि से कंकण (चूड़ी) की कंकण से मणि की, मणि और कंकण से हाथ की शोभा होती है, रात्रि से चन्द्रमा की चन्द्रमा से रात्रि की, रात्रि और चन्द्रमा से आकाश की शोभा होती है, कवि से राजा की राजा से कवि की, राजा और कवि से सभा की शोभा होती है ।

जैनधर्म

स्याद्वादो विद्यते यत्र, पक्षपातो न विद्यते ।
अहिंसाया प्रधानत्वं जैनधर्मः स उच्यते ॥

जिस धर्म में स्याद्वाद (सप्तभंगी) मौजूद हो, पक्षपात न हो, जिसमें अहिंसा को प्रधानता दी गई हो, वह जैनधर्म है।

ब्राह्मण लक्षण

मद्यमांसमधुत्यागी, त्यक्तोदुम्बरपंचकः ।
निशाहारपरित्यक्तः एतद् ब्राह्मणलक्षणम् ॥

अर्थ—जिसने मद्य, मांस, मधु, पंच उदम्बर फल और रात्रि भोजन का त्याग कर दिया, वही ब्राह्मण है।

अन्यायोपार्जित धन

अन्यायोपार्जितं द्रव्यं, दशवर्षाणि तिष्ठति ।
प्राप्ते त्वेकादशे वर्षे, समूलं च विनश्यति ॥

अर्थ—अन्याय से पैदा किया हुआ धन दस वर्ष तक ठहरता है, और ग्यारहवीं वर्ष में समूल नष्ट हो जाता है।

उपकार

अधिकारपदं प्राप्य नोपकारं करोति यः ।
अकारो लुप्यतामेति ककारो द्वित्वतां व्रजेत् ॥

अर्थ—जो अधिकारी बन करके उपकार नहीं करते, उनके अधिकार शब्द में से अकार अलग होकर ककार द्वित्व को प्राप्त होता है। अर्थात् उन्हें धिक्कार है।

अति सर्वत्र वर्जयेत्

अति रूपवती सीता, अति गर्वेण रावण: ।
अति दानवली राजा, अति सर्वत्र वर्जयेत् ॥

अर्थ—सीता के रूप में अति थी, रावण के गर्व में अति थी, वलि राजा के दान में अति थी। इसलिए उनको दुख उठाने पड़े। अतः अति सब जगह छोड़ देना चाहिए।

कर्तव्यो धर्मसंग्रह:

अनित्यानि शरीराणि, विभवो नैव शाश्वत: ।
नित्यं सन्निहितो मृत्यु:, कर्तव्यो धर्मसंग्रह: ॥

अर्थ—शरीर अनित्य है। विभव भी हमेशा नहीं रह सकता। और मौत रोज रोज निकट चली आती है। इसलिए धर्म का संग्रह करना चाहिए।

उधार

उधारितं नैव कदापि देयं, कि कारणं तत्र भवन्ति दोषा: ।
अर्थस्य हानिर्कलहस्य मानं, दातव्य दाने भृकुटि करोति ॥

अर्थ—उधार कभी नहीं देना चाहिए, क्योंकि उधार देने में बहुत से दोष हैं। पैसे की हानि होती है, कलह भी होती है, और कर्जदार देते समय भृकुटी चढ़ाता है।

परेशानी

घृतलवणतैलतन्दुलशाकेन्धनचिन्तयानुदिनम् ।
विपुलमतेरपि पुंसो नश्यति धीः मन्दविभवत्वात् ॥

अर्थ – विद्वान पुरुष की अक्ल थोड़ा-सा विभव होने पर घी, नमक, तेल, चावल, शाक और ईंधन की खोज की फिकर से नष्ट हो जाती है।

धन

माता निन्दति नाभिनन्दति पिता, भ्राता न संभाषते ।
भृत्यः कुप्यति नानुगच्छति सुतः, कान्ता च नालिंगते ॥
अर्थप्रार्थनशंकया न कुरुते,—प्यालापमात्रं सुहृत ।
तस्मादर्थमुपार्जयस्व च सखे, ह्यर्थस्य सर्वे वशाः ॥

अर्थ – विना पैसे के माता निन्दा करती है, पिता अभिनन्दन नहीं लेता, भाई बोलता नहीं, नौकर नाराज रहता है, पुत्र आज्ञा नहीं मानता, स्त्री आलिंगन नहीं करती, मित्र लोग कुछ मांगने न लग जाये इस कारण बोलते नहीं हैं। इसलिए मित्र ! धन कमाओ। धन से सब वश में होते हैं।

सत्रह नियम

भोजने षट्रसे पाने कुंकुमादिविलेपने ।
पुष्पताम्बूलगीतेषु नृत्यादौ ब्रह्मचर्यके ॥
स्नाने भूषणवस्त्रादौ वाहने शयनासने ।
सचित्तवस्तुसंख्यादौ प्रमाणं भज प्रत्यहम् ॥

अर्थ—गृहस्थ को नीचे लिखे १७ नियम रोज रोज करना चाहिए। १-भोजन, २-षट्रस, ३-पेय पदार्थ, ४-कुंकुमादि लेप, ५-पुष्प, ६-राग, ७-गीत, ८-नृत्य, ९-ब्रह्मचर्य, १०-स्नान ११-आभूषण, १२-वस्त्र, १३ वाहन, १४-शयन, १५-आसन, १६-सचित्त वस्तु की संख्या, १७-दिशाओं में आने जाने का नियम (देशव्रत)।

स्वार्थ

वृक्षं क्षीण फलं त्यजन्ति विहगाः शुष्कं सरं सारसाः।
पुष्पं पर्युषितं त्यजन्ति मधुपाः दग्धं वनान्तं मृगाः॥
निर्द्रव्यं पुरुषं त्यजन्ति गणिका, भ्रष्टं श्रियं मन्त्रिणः।
सर्वे कार्यवशात् जनोऽभिरमते कस्यास्ति को वल्लभः॥

अर्थ—पक्षीगण जिस वृक्ष पर फल नहीं रहते उसे छोड़ देते हैं। सारस सूख जाने पर तालाब, फूल की सुगन्धि चली जाने पर भौंरे, जले हुए वन को हरिण, बिना पैसे वाले मनुष्य को वेश्या, मंत्री भ्रष्ट राजा को इसी तरह छोड़ देते हैं। सभी अपने अपने मतलब से प्रेम करते हैं, कोई किसी का नहीं है।

पुत्री को शिक्षा

अभ्युत्थानमुपागते गृहपतौ तद्भाषणे नम्रता।
तत्पादार्पितदृष्टिरासनविधौ तस्योपचर्या स्वयं॥
सुप्ते तत्र शयीत तत्प्रथमतो जह्याच्च शय्यामिति।
प्राज्ञैः पुत्रि निवेदिता कुलवधू-सिद्धान्तधर्मा इमे॥

अर्थ - बुद्धिमान लोग पुत्री को शिक्षा देते हैं कि वे पुत्री कुलवती स्त्रियों के निम्न प्रकार धर्म हैं :

१ - पति के घर आने पर खड़े होना, २ - उसको नमस्कार पूर्वक बोलना, ३ - हमेशा नीचे निगाह रखना, ४ - बैठने के लिए उचित आसन देना, ५ - उसकी स्वयं सेवा करना, ६ - पति के सो जाने के बाद सोना व उसके जागने से पहिले उठ जाना।

स्त्री कर्तव्य

कार्ये दासी रतौ वेश्या, भोजने जननी समा।
आपत्सु बुद्धिदात्री च सा भार्या भुवि दुर्लभा॥

अर्थ—१—काम करने में दासी के समान, २—रति में वेश्या के समान, ३—भोजन में माता के समान, ४—आपत्ति में बुद्धि देने वाली स्त्री संसार में दुर्लभ है।

परलोक का संगी

धनानि भूमौ पशवश्च गोष्ठी नारिगृहद्वार जना श्मशाने।
देहश्चितायां परलोकमार्गे धर्मानुगागो गच्छति जीव एकः॥

अर्थ—मरने पर धन जमीन में गड़ा रह जाता है। पशु बेड़े में, स्त्री घर के दरवाजे तक, कुटुम्ब के लोग श्मशान भूमि तक, देह चिता तक रह जाती है। सिर्फ एक धर्म ही इस जीव के साथ जाता है।

दोहावली

कला बहत्तर पुरुष की तामें दो सरदार।
एक जीव आजीविका एक जीव उद्धार ॥१॥

पशु की होत पन्हैया नर को कछु न होय।
जो नर करनी करे नर से नारायन होय ॥२॥

विनय दया अरु प्रेम से जासु हृदय भरपूर।
नहिं मानुष वह देवता गहहु तासु पद मूर ॥३॥

काया शीशी कांच की छिन में जैहै फूट।
ढील न कीजे धरम रस लूटो जाय तो लूट ॥४॥

जन्म मरण के कारणे रतन हाथ से चले गमाय।
तीन बात मिलना है दुर्लभ शास्त्रज्ञान धन नरपर्याय ॥५॥

मर जाऊं मांगू नहीं अपने तन के काज।
पर उपकार के कारणे नेक न आवे लाज ॥६॥

अपनी पहुंच विचार के करतब करिये दौर।
तेते पांव पसारिये जेती लांबी सौर ॥७॥

है फंसा व्यसनों में जो वह वीर है किस काम का।
जंग जिसको खा चुका वह शस्त्र है किस काम का ॥८॥

जि लागें दश बीस[1] सों ते तेरह पंचास[2]।
सोरह बासठ[3] कीजिये छांड़ चार को बास ॥९॥

१—तीस=ती से=धी से, २—त्रेसठ=वे मूर्ख हैं,
३—अठहत्तर=अठ-हत्=मर।

काल करे सो आज कर आज करे सो अब।
पल में परलय होत है बहुरि करेगो कब ॥१०॥

पहले कसकर खूब परख लो पीतल है या सोना।
चमक दमक पर रीझ कहीं अपना सर्वस्व न खोना ॥११

सरल सबल मन आनन्दित रख धीरज चित्त धरो।
निज उद्देश्य पूर्ण करने में विघ्नों से न डरो ॥१२॥

निराशा भीरुता लाना समझ लो ये है कायरता।
उसी को सिद्धि मिलती है जो डरका सामना करता ॥१३

अपनी अपनी ठौर पर सबके होते दाव।
जल में गाड़ी नाव पर थल गाड़ी पर नाव ॥१४॥

ज्वर जाचक अरु पाहुना इनको यही विचार।
लंघन तीन कराय दे फेर न आवे द्वार ॥१५॥

कारज धीरे होत हैं काहे होत अधीर।
समय पाय तरुवर फले केतक सींचो नीर ॥१६॥

आमद थोड़ी खर्च घनेरा ये लक्षण मिट जाने का।
कुव्वत थोड़ी रोष घनेरा ये लक्षण पिट जाने का ॥१७॥

जो सुख चाहो शरीर का वस्तु त्यागिये चार।
चोरी चुगली जामनी और पराई नार ॥१८॥

शुभ कामों में देर लगाना नहीं बुद्धिमानी का काम।
बड़े २ ज्ञानी विज्ञानी कहते हैं ये बात तमाम ॥१९॥

अनुचित निकल गया हो यदि कुछ हे भाई तुम गुणगणधाम।
क्षमा कीजिये उसे बन्धुवर जाता हूं बस तुम्हें प्रणाम ॥

* सूक्तियां *

संसार कर्म क्षेत्र है, यहाँ आने पर सभी लोगों को कुछ न कुछ करना पड़ता है। ऐसी अवस्था में सब लोगों का अपने हाथ में लिए हुए कामों को ठीक तरह से पूरा उतारने और उसमें यथासाध्य यश प्राप्त करने की इच्छा रखना बहुत ही स्वाभाविक और योग्य है।

—सफलता और उसकी साधना के उपाय।

मनुष्य ठीक तरह उसी काम को कर सकता है, व उसी में सफलता प्राप्त कर सकता है जिसकी सिद्धि में उसे हार्दिक विश्वास है। —दिव्य जीवन।

स्वतन्त्रतापूर्वक परिश्रम करके रोटी कमाना और पर्णकुटी में रहना अच्छा, किन्तु पराई तावेदारी करके महलों में रहना और सब तरह के ऐशो-आराम करना अच्छा नहीं। सोने के पिंजड़े में कैद होकर मोती चुगने वाली चिड़िया से, जंगल में आजादी से घूम फिर कर अपनी जीविका उपार्जन करने वाली चिड़िया हजार दर्जे अच्छी है। —अमूल्य सहस्र हीरे।

आत्मविश्वास रखो। इसी लोहे के तार से प्रत्येक का हृदय स्पन्दित होता है। —प्रभावशाली जीवन।

जिस मनुष्य से अपने देश को (या धर्म को) कोई काम न हो उससे तो मिट्टी का खिलौना ही अच्छा जो बच्चों का दिल तो बहलाता है। —प्रभाव।

इनसे बचना चाहिए—जंगल के भील से, आसमान की चील से, किवार की खील से और कचहरी के वकील से।

—अज्ञात।

हमेशा दो जेबें रखो—एक तो बहुत बड़ा अपमान, अनादर आदि सहने के लिए, और दूसरा छोटा रुपया रखने के लिए।

—सफलता के उपाय।

पक्षपात, तरफदारी, आदमी की आँखों को वास्तविकता की ओर से अन्धा बना देती है।

—जेम्स एलन।

खुशामद करने वालों से सदा बचो, वह बड़ा भारी चोर होता है, वह तुम्हें मूर्ख बनाकर तुम्हारा समय चुराता है और बुद्धि भी।

—सफलता के उपाय।

संसार की अन्य चीजों की कीमत है, क्योंकि उन्हें संसारी बना सकते हैं, पर जीवों को कोई नहीं बना सकता अतः वे अमूल्य हैं। जब उनका कोई मूल्य नहीं चुका सकता तो उनके मारने का अधिकार ही उनको क्यों है?

—अज्ञात।

योग्य मनुष्य को काम के लिए दूर नहीं जाना पड़ता।

—सफलता के उपाय।

ब्रह्मचर्य ही जीवन है। ब्रह्मचर्य से स्मृति स्थिर और संग्राहक बनती है, बुद्धि तेजस्विनी और सफलवती बनती है।

—अज्ञात।

गधा बेशक बेहूदा जानवर है, मगर हमारा बोझ ढोता है, इसलिए हमें वह प्यारा है। मतलब यह कि सबको काम प्यारा है।

अमूल्य सहस्र हीरे।

* सूक्तियां

संसार कर्म क्षेत्र है, यहां आने प
न कुछ करना पड़ता है। ऐसी अवस्थ
हाथ में लिए हुए कामों को ठीक तर
उसमें यथासाध्य यश प्राप्त करने की
स्वाभाविक और योग्य है।

—सफलता और उ

मनुष्य ठीक तरह उसी काम को
में सफलता प्राप्त कर सकता है जिस
विश्वास है।

स्वतन्त्रतापूर्वक परिश्रम करके रो
में रहना अच्छा, किन्तु पराई तावेदार
और सब तरह के ऐशो-आराम करना
पिंजड़े में कैद होकर मोती चुगने वा
आजादी से घूम फिर कर अपनी जीवि
चिड़िया हजार दर्जे अच्छी है।

आत्मविश्वास रखो। इसी लोहे
हृदय स्पन्दित होता है।

जिस मनुष्य से अपने देश को (
न हो उससे तो मिट्टी का खिलौना ही
दिल तो बहलाता है।

इनसे बचना चाहिए—जंगल के भील से, आसमान की चील से, किवाड़ की खोल से और कचहरी के वकील से।

—अज्ञात।

हमेशा दो जेबें रखो—एक तो बहुत बड़ा अपमान, अनादर आदि सहने के लिए, और दूसरा छोटा रुपया रखने के लिए। —सफलता के उपाय।

पक्षपात, तरफदारी, आदमी की आँखों को वास्तविकता की ओर से अन्धा बना देती है। —जेम्स एलन।

खुशामद करने वालों से सदा बचो, वह बड़ा भारी चोर होता है, वह तुम्हें मूर्ख बनाकर तुम्हारा समय चुराता है और बुद्धि भी। —सफलता के उपाय।

संसार की अन्य चीजों की कीमत है, क्योंकि उन्हें संसारी बना सकते हैं, पर जीवों को कोई नहीं बना सकता अतः वे अमूल्य हैं। जब उनका कोई मूल्य नहीं चुका सकता तो उनके मारने का अधिकार ही उनको क्यों है? —अज्ञात।

योग्य मनुष्य को काम के लिए दूर नहीं जाना पड़ता।

—सफलता के उपाय।

ब्रह्मचर्य ही जीवन है। ब्रह्मचर्य से स्मृति स्थिर और संग्राहक बनती है, बुद्धि तेजस्विनी और सफलवती बनती है।

—अज्ञात

गधा बेशक बेहूदा जानवर है, मगर हमारा बोझ ढो[ता] है, इसलिए हमें वह प्यारा है। मतलब यह कि सबको का[म] प्यारा है। अमूल्य सहस्र हीं[रे]

अकेले आये हो, अकेले जाओगे, दुनियां में किसी का सहारा न टटोलो। —अज्ञात

संसार में जितनी बहुमूल्य चीजें हैं, उनमें समय सबसे ज्यादा कीमती है। जो लोग समय को व्यर्थ बरबाद कर रहे हैं उनसे कह दो 'तुम्हारे जीवन के एक एक मिनट में कुबेर की सम्पत्ति छिपी है" सावधानी से समय का सदुपयोग करो। —नयी रोशनी

धैर्य के बिना लक्ष्मी नहीं, शौर्य के बिना सफलता नहीं, ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं, और दान के बिना यश नहीं मिलता। —अज्ञात

जिस आदमी की आंखें बुरे काम न करने के कारण कभी नीचे नहीं हुई वही आदमी सच्चा वीर है। —प्रभावशाली जीवन

इस संसार की नाट्यशाला में एक स्थान मेरे लिए भी रिक्त है, परन्तु नाटक मेरे आने की प्रतीक्षा में न रुका रहेगा। —अज्ञात।

उद्योगी, साहसी मनुष्य सफलता के उच्च शिखर पर चढ़ाने के लिए विफलताओं से सीढ़ियों का काम लेते हैं, और अकर्मण्य पुरुष उनसे घबराकर जहां के तहां रह जाते हैं। —रामचन्द्र वर्मा

प्रेम, नम्रता, दया, शक्ति, उत्साह और संकल्प की दृढ़ता ऐसे गुण हैं जो जीवन को वैभवशाली बनाते हैं। —अज्ञात।

समाप्त